स्वयंवर आधुनिक सीता का

स्वयंवर आधुनिक सीता का

पूरन सरमा

© पूरन सरमा
ISBN 81—7056—007—1
मूल्य : पच्चीस रुपये
प्रथम संस्करण : 1986
प्रकाशक : पंचशील प्रकाशन
फिल्म कालोनी, जयपुर-302 003
मुद्रक : कमल प्रिंटर्स
9/5866, गांधीनगर, दिल्ली-110031

अनुक्रम

महंगाई की व्यथा

उस दिन महगाई वहुत क्षुब्ध थी। मिलते ही जोर-जोर से रो पडी। मैं उसे आश्चर्यचकित देखता रह गया और हैरानी मे बोला, 'क्यो, तुम्हें रोने की क्या जरूरत है? रोयें तुम्हारे कारण सताये लोग।'

'यही तो मेरा दर्द है। सच, मेरे दर्द को कोई नही समझेगा। दिन दूनी रात चौगुनी बढ़ रही हूं। यह भी कोई जीवन है, जिसमे बदनामी के सिवा कुछ न मिले।' महंगाई बोली।

'लेकिन तुम महंगाई हो, तुम्हारी शान इसी में है कि तुम निरतर फल-फूलती रहो।' मैं उसके आसुओ को पोछकर बोला तो वह बिफर पडी, 'रहने दो आदमी! कल तुम मुझे गाली दे रहे थे और आज मेरे आसू पोछ रहे हो। गैस सिलेण्डर वाले को पैसे देते हुए कल तुम कितने बिगड़े थे और तुमने मुझे कितना कोसा था। तो क्या मैं इसी तरह आदमी से कोसी जाती रहूं? सच है अबला को सदैव दुनिया के लोग इसी तरह शोषित करते रहे हैं।'

'देखो बहन, ऐसी कोई बात नही है। सरकार को कीमतें विकास के लिए बढ़ानी ही पड़ती हैं। जिस देश के नागरिक महगाई के बावजूद मर-खपकर यदि क्रय करते रहते हैं तो यह उसकी प्रगति का द्योतक है, गरीबी मिटाने का आंकडा इसी से साफ होता है। फिर यह भी है कि जिन चीजो को गरीब को खरीदना ही नही उनमे भला वह क्यों त्रस्त होगा, तुम्हें वहम है कि तुम बदनाम हो रही हो। पता भी है जिस दिन भाव गिर जायेंगे—उस दिन तुमसे कोई बात भी नही करेगा।' मेरी बात का उस पर कोई प्रभाव नही पड़ा—बोली, 'रहने दो आदमी, तुम चालाक हो। मुह

देखकर तिलक करते हो। मैं मिल गयी तो मेरी बात, मैं नही तो मेरी बगावत।'

'वहम की कोई दवा नहीं है महंगाई मैडम, तुम्हारे बारे मे बात करना केवल फैशन है। आम आदमी को क्या लेना-देना तुमसे ? यह तो सत्तारूढ दल तुम्हारा झुनझुना विपक्ष को थमाकर खुद मौज मारता है। तुम राजनीति की शिकार हो दरअसल।' मैंने कहा।

महगाई की आंखों में चमक आई। और वह बोली, 'अब समझे आदमी तुम मेरी बात को। मेरा यही तो दर्द है कि मै इस राजनीति के चुगल से कब-कैसे मुक्त हो पाऊगी ?'

'तुम्हारा और राजनीति का तो अब चोली-दामन का साथ है। परेशान होने से कुछ नही होगा। हो सके तो उससे पूरी तरह समन्वय कर लो। दुखी रहने की नियति से सारा जीवन नरक बना बैठोगी मैडम।'

'लेकिन मेरे अकेले के कारण लाखों-करोडों लोगो का जीवन नरक हो रहा है। अच्छा हो मै अकेली इस नरक मे सड़ती रहूं। आम आदमी को राहत मिलेगी।' महगाई अत्यन्त विरक्त भाव से बोली।

'लेकिन आज तुम कैसी बहकी-बहकी बातें कर रही हो। इससे पहले तो तुमने कभी भी इतनी पीड़ा जाहिर नही की। आखिर बात क्या है ?' मैंने पूछा।

'सच तो यह है आदमी मैं इस जीवन से ऊब गयी हू। मेरे लिए आंदोलन-हडताल-प्रदर्शन हो। बेकसूर मरे-पिटें, यह कहा की बात है ! वोट के जाल मे मुझे इतना उलझा रखा है कि मैं किसी भी तरह मुक्त नही हो पा रही। विपक्षी आदोलन महज इसीलिए करते है ताकि जनता मे उनका प्रभाव जम सके। सरकार अपने खाली राजकोष और बढते मूल्यों की बात करके उपभोक्ता को दिलासा देती है और उपभोक्ता चुनाव के समय सारी बातें भूलकर जिस भी दल के चगुल मे फस जाये, वोट दे डालता है, मतलब क्या हुआ। मेरा जीवन धिक्कारने योग्य है मानव !' महगाई ने मन की सचाई खोली।

मैं बोला, 'इतना निराश मत हो मैडम महगाई। जीवन मे सभी तरह के क्षण आते है। यदि तुम अपने बढ़ने को बुरी बात मानती हो तो थोड़ा

धीरज धरो, अगले आम चुनाव में विपक्षी की सरकार बनने पर तुम्हें मुक्ति मिल जायेगी। आज भी वह तुम्हे मुक्त कराने तथा कम कराने के उपायों के लिए जूझ रहा है। जिस दिन उनका राज आयेगा, तुम्हारी हालत में अपने आप सुधार हो जायेगा।'

'तुम फिर यहीं मात खा गये आदमी। विपक्ष भी मेरे साथ यही सलूक करेगा—जो आज सरकार कर रही है, क्योंकि तब वह 'सरकार' बन जायेगा।'

तो फिर कैसे-क्या हो? तुम्हें मेरी किसी बात पर विश्वास नहीं। आखिर इसका निदान तुमने भी तो सोचा होगा।' मैंने पूछा।

'है इसका निदान—मेरा नाम बदलकर नया नामकरण कर दिया जाय। ताकि मैं तो बदनाम जीवन से मुक्त हो जाऊ।'

'इसका मतलब तुम्हारा मर्ज लाइलाज है। इसलिए तुम फकत नाम बदलकर तसल्ली करना चाहती हो। इससे होगा क्या मैडम? छोड़ो इस रोने को। देखो जीवन कितना रंगीन है—रोयें रोने वाले, इस समय तुम्हारे दिन हैं। यह उम्र ढल गयी तो फिर कुछ नहीं।' मैं बोला।

महगाई ने स्मित हास्य से कहा, 'आदमी भले तुम बूढे हो जाओ—पर मुझे सदा बहार बनाये रखने के उपाय शिखर पर हैं। मैं तो वाकई अपने चेहरे पर झुर्रियां चाहती हू। गरीब-गन्दी कच्ची बस्तियों, गावों में जाकर देखो। भूख से तड़प रहे हैं लोग। कैसे-तैसे पेट भरते हैं।'

'लेकिन यह दर्द तुम्हारा नहीं है। राजनीति ने तुम्हारी यही नियति बना दी है—तो इसमें दोष तुम्हारा कहां है। जनता जानती है यह सब सरकार ने किया है, और घबराने की क्या बात है—पूरा विपक्ष तुम्हारे लिए एक हो गया है। अब प्रयास ही तो किये जा सकते है—वे किये जा रहे हैं। यह चक्र ऐसा है जो अनादि काल से चल रहा है और सच मानो यह जो नयी इक्कीसवी सदी की तैयारियां हैं—वे सब तुम्हारे लिए ही समर्पित होंगी। इक्कीसवी सदी मे तुम्हारा भविष्य और भी उज्ज्वल होगा। उस समय बातें रोजी-रोटी-बेकारी की नहीं, केवल मशीनों की कम्प्यूटरों की, तथा रोबोटों की होगी। जो तुम्हारी बात भी करेगा सदी मे जीने का अधिकार खो बैठेगा। जीवन और स्तर दोनो चरमशिखर पर होगे। ऐसे में गरीबी-

महगाई और बाजार भावों की जो भी चर्चा करेगा, बेमौत मारा जायेगा। वह विकास का चरमोत्कर्ष होगा। उस समय यह दकियानूसी पूर्ण बातें नहीं चलेंगी। बस थोड़े दिन धैर्य रखो, उसका पूर्वाभ्यास प्रारंभ हो गया है। जिस दिन लोग उस नयी सदी में जाकर गिरे अपने आप तुम्हें इस जीवन से मुक्ति मिल जायेगी। लोग चाहकर भी तुम्हें गाली नहीं दे पायेंगे। तुम्हारा वर्तमान बदनामी भरा जीवन मिट जायेगा।'

मेरी इस बात पर महगाई चिहुंक पड़ी। मुझे उसे भरमाने में सफलता मिल गयी थी, अतः वह बोली, 'सच बताओ वह सदी कब तक आ जायेगी? क्या मैं उस वक्त वर्तमान जीवन से मुक्ति पा जाऊंगी? अब मैं यह कह सकती हू कि थोड़े दिन और बना लो बेवकूफ मुझे, अब दिन फिरने वाले हैं' मेरे हर्ष में नाचते हुए वह मुझसे विदा हो गयी। मैं पत्नी पर इस बात पर पिल पड़ा तुम घर का खर्चा ज्यादा करती हो। इस महगाई में तो कम-से-कम घर का खयाल करो और कम-से-कम उस समय तक तो करो जब तक कि इक्कीसवी सदी आ नहीं जाती।

कुरता, पाजामा और शाल

पिछले दो महीने मे पत्नी जोर दे रही थी कि अब मुझे पैन्ट-शर्ट के स्थान पर कुरता-पाजामा व शाल की पोशाक को अपनाना चाहिए। इस मामले मे मेरी पत्नी मुझसे काफी आगे है कि मुझे किस समय क्या पहनना-ओढ़ना अथवा बोलना-समझना चाहिए। इस सामयिक चेतना मे सजग होने के कारण ही वह लाइफ-पार्टनर के साथ-साथ मेरी निजी सचिव भी है। जिन दिनों वह कुरता-पाजामा व शाल की खरीद पर जोर दे रही थी—उन दिनो मै ज्यादा 'कॉशस' नही था। उसका दुष्प्रभाव मुझ पर पड़ा। और जब मैं खादी की दुकान पर इसकी खरीद के लिए पहुचा तो बड़ा पछताया। मुझे बताया गया कि इस समय स्टॉक मे माल नहीं है। यदि आप आर्डर बुक करायें तो महीने भर बाद माल मिल सकता है। बड़ा अफसोस हुआ कि एक महीने बाद तो मेरे समकालीन कुरता-पाजामा व शाल के सहारे कहां से कहां निकल जायेंगे।

यकायक इस विशेष परिधान के प्रति उमड़ा प्रेम-भाव दग कर देने वाला था। कुरता-पाजामे के लिए एक महीने पहले बुकिंग कराओ तब जाकर यह पोशाक नसीब हो। मन की तसल्ली करने के लिए शहर की अन्य तमाम दुकानों की खाक छान मारी परन्तु हर कही महीने-डेढ महीने से पहले की बुकिंग नही मिली। पत्नी का कहा नही मानने का मन मे पछतावा हुआ।

शाल तो खरीद ही लिया जाए—इस दृष्टि से दुकानें टटोली तो भाव दुगुने-तिगुने बढ़े मिले। साधारण सौ रुपये का शाल दो-ढाई सौ रुपये तक जा पहुंचा था। फिर रंग भी वही चाहिए था जो आजकल चल रहा है, कई-

कई दुकानों पर वह प्रचलित रंग नहीं मिला। एक दुकान पर मिल भी गया तो वह तीन सौ रुपये माग रहा था। परन्तु सवाल उस समय पैसे का नहीं, ममग की बलिहारी पर चढ़े जरूरतमद इसान की भावनाओं का था। शाल खरीदा गया और आय का एक चौथाई भाग शाल वाला ले भागा। इसी दरम्यान पत्नी ने यह हिदायत भी दे दी थी कि हो सके तो 'कैप' भी यथा-समय ही ले आना वरना बाद मे उसकी शोध करते फिरोगे। मैंने एहतियात के तौर पर अपनी नाप की सफेद कलफदार टोपियों का एक पूरा सैट भी ले लिया। पता नहीं कब श्रीमान टोपी धारण करना शुरू कर दें और टोपियां बाजार से गायब हो जायें। इस देश मे यही सबसे बड़ी विशेषता है कि जो चीज मागो वही नदारद होकर जमाखोरों के काले धन्धों का आधार बन जाती है। कुरता-पाजामे का आर्डर अलग बुक करवा ही दिया था। चार अदद जोड़ों के इस आदेश के बाद मैंने थोड़ी राहत की सांस ली।

परन्तु इस बीच ही चुनावों की घोषणा हुई और मेरे सर पर परेशानी आ खड़ी हुई। इस बार प्रत्याशी चयन के लिए साक्षात्कार प्रक्रिया अपनाई गयी। पोशाक के लिए तकाजा किया तो इंकार मिला। कहा गया कि थोड़ा ब्लैक मनी दे सको तो दूसरे की बनी-बनाई पोशाक आपको सप्लाई की जा सकती है। सवाल टिकिट का था अत सिवाय ब्लैक में कुरता-पाजामा खरीदने के और कोई चारा नहीं था। कुरता-पाजामा पहन शाल को उसी अंदाज में लपेटा, दर्पण के सामने जाकर पूरी देह देखी तो काफी साम्य नजर आया मुझमें और उनमें।

पत्नी ने बड़ी ही संजीदगी से मुझ पर दृष्टिपात किया और शाल का पल्ला कुछ ठीक किया और टोपी को मेरे सिर पर धर दिया। आइना देखा तो मेरा कायाकल्प हो चुका था तथा मेरी आत्मा अलग ही सेवा-भावना से सराबोर सत्ता की सीढ़ियां चढ़-उतर रही थी। पत्नी ने गंभीरता की चादर कुछ और घनी की और कहा, 'देखिये साक्षात्कार थोड़ा सावधानी और सतर्कता से दें।'

मुझे क्या कहना चाहिए—साक्षात्कार में मैंने राजनैतिक गुरू से दीक्षा लेते हुए पूछा।

आपसे पूछा जायेगा कि आप क्या करते हैं? आपको कहना है कि मैं

अभी तक समाज-सेवा करता रहा हू। वे पूछें कि घर-खर्च कैसे चलता है? तो आप कहें कि बस एक ट्रस्ट मे ट्रस्टी हू पेड। वे सब समझ जायेंगे कि आप क्या-कैसे करते होंगे। यह बताने की जरूरत नही है कि आप विदेशी सामान की हेरा-फेरी या तस्करी करते है। यह बात आपके सर्वथा हित मे है कि आपने आज तक कोई सर्विस वगैरह नही की है।

पत्नी के इस अचूक नायाब नुस्खे के सहारे मैं साक्षात्कार के लिए जा पहुंचा। पेपर पहले आऊट हो ही चुका था। पत्नी ने जो बातें बतायी—वे ही पूछी गयी और मेरे जवाब तदनुरूप हाईकमान द्वारा नियुक्त प्रतिनिधियों को प्राप्त होते गये। वे बड़े प्रसन्न हुए कि मैं युवा हू तथा समाज-सेवा के जरिए समाज में कुछ बुनियादी तब्दीलियो का पक्षधर हू। यहा यह भी उल्लेख करना प्रासगिक होगा कि बालो की जडों-कलमों मे सफेदी पर्याप्त आ गयी थी अतः मैं हेयर ड्रेसर से डाई कराके गया था। जिससे मुझमे ताजगी व युवावस्था और भी सवर उठी थी, हाईकमान का प्रतिनिधि यह जज नही कर पाया कि मेरे बाल सफेद होने लगे हैं। उस साक्षात्कार के बाद मुझे विश्वास हो गया कि अब चुनाव प्रत्याशी के रूप मे मेरा चयन 99 प्रतिशत निश्चित है परन्तु फिर भी प्रदेश पार्टी नेताओं की सिफारिश व उनकी कृपा दृष्टि का होना नितात आवश्यक बताया गया। मैंने सोर्स निकाला तो एक व्यक्ति दिखाई दिया। वही व्यक्ति यह काम आसानी से कर सकता था। परन्तु वह भी पूछ मोटी किये बैठा था। आखिर खिला-पिलाकर उसे मस्त किया तब जाकर वह पार्टी प्रदेशाध्यक्ष से मिलाने ले गया। अध्यक्ष महोदय ने मुझसे बात करने की बजाय उससे अलग ले जाकर बातचीत की। मालूम पड़ा कि अध्यक्ष महोदय अपने समर्थित उम्मीदवार के लिए दो लाख रुपये की माग कर रहे थे। मेरी जमीन खिसक गयी।

आखिर प्रत्याशियो का अतिम चयन हो गया। हुआ वही जिसकी प्रबल संभावना थी। मेरे नाम पर कम्प्यूटर राजी नहीं हुआ और मुझे अंक कम मिले। बड़ी पीड़ा हुई। कुल हिसाब लगाया तो कुरता-पाजामा, शाल व पार्टी आवेदन पत्र शुल्क तथा सिफारिश एवं किराये की टैक्सी पर पांच हजार से सात हजार रुपये बर्बाद हो चुके थे। एक माह की अवधि का समय बरबाद हुआ सो अलग परन्तु प्रसन्नता इस बात की थी कि जो पोशाक मैंने

धारण की थी उसका पर्याप्त महात्म्य था। इस उजली पोशाक की छाया में मेरे काले धंधे की तूती जोरों से बोलने लगी थी। मेरा काम दिन दूना रात चौगुना बढ़ रहा था। इस बार राजनीति में नहीं आने का ज्यादा दुख नहीं है और मुझे विश्वास है यदि इसी रफ्तार से मेरी तरक्की चलती रही तो मैं पार्टी हाईकमान को दो लाख रुपये देने की पोजीशन में पहुंच जाऊंगा। सही भी है जब आज सिनेमा तक का टिकिट बिना ब्लैक के नहीं मिलता तो फिर यह टिकिट केवल छवि के आधार पर बिना ब्लैक कैसे मिल सकता है? फिर मेरा स्वयं का काम भी तो कोई साफ-सुथरा नहीं है! परन्तु फिलहाल मैं कुरता-पाजामा-शाल व टोपी में लिपटा शालीन व्यक्तित्व धारण कर चुका हूं। इसका लाभ वर्तमान में मिल रहा है इसलिए भविष्य के अंधकारमय होने का तो प्रश्न ही नहीं है!

असली साहित्यकार

यह विषय इतना सामयिक हो गया है कि निरंतर विवाद के बावजूद हल होने का नाम ही नहीं लेता। साहित्यकार और असली साहित्यकार का फर्क समझ में तो आता है परन्तु उसकी मान्यता गले नहीं उतर पाती। आदमी जब साहित्यकार हो जाता है तब वह आम आदमी से पर्याप्त रूप से भिन्नतायें ग्रहण करता है और यदि असली साहित्यकार बन जाये तो हद से ज्यादा विशिष्ट बन जाता है। साहित्यकार और असली साहित्यकार के भेद को समझना आज की स्थितियों में नितांत जरूरी है वरना कई जगह हमें दिक्कतों का सामना करना पड़ सकता है। वह इसलिए कि जैसे पत्रकार को साहित्यकार मान लिया जाये या कि साहित्यकार को असली साहित्यकार मान लिया जाये और असली साहित्यकार को घसियारा।

आजकल पत्रकार और साहित्यकार में तो ज्यादा फर्क नहीं है, वहां फकत दृष्टि भेद है, क्योंकि पत्रकार साहित्यकार बन रहे हैं और साहित्यकारों का रुझान निरंतर पत्रकारिता की ओर हो रहा है। इसलिए इन दोनों के बीच इतनी घपलेबाजी हो गयी है कि पत्रकार और लेखक दोनों को साहित्यकार मानना ही हित में है। पत्रकारों के हाथ में अखबार है। अतः वे खूब लिखते हैं—लिखने वाला लेखक होता है और लेखक साहित्यकार होता ही होता है, इसमें दो राय कहीं नहीं हैं। लेखक, पत्रकार-सम्पादक की कृपा पर आजकल बहुत निर्भर हो गया है। अतः उसका साहित्यकार बनना उस पर ही है। चूंकि लेखक भी छपता है। अतः वह भी साहित्य को रचने वाला है, इसी आधार पर उसके भी साहित्यकार होने में शक नहीं है।

लेकिन हमें जानना है उस जीव के बारे में जो असली साहित्यकार है। असली साहित्यकार की स्थिति आजकल वैसी ही है—जैसी कि असली घी की। वनस्पति घी के चलन व मिलावटियों की साजिशों के पीछे जैसे देसी घी अपनी मूल पहचान खो बैठा है, उसी तरह यह असली साहित्यकार भी बहुत ही उपेक्षित रह गया है। असली साहित्यकार की अव्वल पहचान यह है कि वह साल में एकआध बार लिखता है और फिर लम्बी चुप्पी साध जाता है। वह ज्यादा छपने वाले लेखकों की आलोचना करता है तो बचे समय में त्यौरियां चढाये जबरन की एक और गंभीर मुद्रा चिन्तन प्रधान शिल्प में अपने कमजोर चेहरे पर लगाये रखता है। असली साहित्यकार लिखता कम और भाषण ज्यादा देता है। यदि उसके मौखिक वचनों को टेप किया जाये तो प्रतिदिन एक पाकेट बुक तैयार की जा सकती है। यह जीव साहित्य को मौखिक रूप से ज्यादा नष्ट करता है। साहित्य का यह भाषण इतना ऊल-जलूल व जटिल होता है कि पत्रकार और साहित्यकार आम तौर पर ऐसे समय में उबासियां लेते हैं तथा उससे पिण्ड छुड़ाने को छटपटाते हैं।

असली साहित्यकार घर में बच्चों तथा बीवी पर भी साहित्य का क्षय करता है। वह बात-बात में साहित्यिक बिम्बों और प्रतीकों के जरिये जीवन शैली उभारता है तथा मुश्किलों में अनजान बनकर साहित्य के प्रति गहरी चिंता व्यक्त करता है। इस वजह से घर वाले भी इस लेखक को ज्यादा नहीं छेड़ते तथा अपने आपको बचाने के प्रयत्नों में लगे रहते हैं। यह जीव आम तौर पर घर में पड़ा ही पाया जाता है तथा कामधाम व नौकरी आदि के प्रति इसकी रुचि कतई नहीं पायी जाती है। आम तौर पर असली साहित्य-कार की पत्नी कमाती है और वह फोकट की रोटियां खाकर दिन भर साहित्य की उधेड़बुन में लगा रहकर पान की दुकान तथा चाय-पकौड़ी की थड़ियों पर साहित्य बघारता है। वह इन स्थानों पर घण्टे से लेकर सात-आठ घण्टे प्रतिदिन नष्ट करता है और अपने साहित्यकार को जीवित बनाये रखता है।

असली साहित्यकार चूंकि स्पष्ट रूप से असली है अतः वह छपने पर ऊपरी तौर पर ज्यादा जोर नहीं देता। वह सामग्री की गरिष्ठता तथा उसके

बोझिलपन को निरंतर उभारने मे लगा रहता है। हालांकि उसकी हार्दिक तमन्ना अधिकाधिक छपने की होती है तथा पारिश्रमिक प्राप्त करने की भी, परन्तु यह भाव वह कभी भूल से भी प्रकट नही करता तथा निर्लिप्त भाव से दिन भर थूक बिलोता है। वह ज्यादा छपने वाले साहित्यकारों पर प्रोफेशनल होने का लाछन लगाकर खुश होता है तथा उनके साहित्य की खिल्ली उड़ाकर घटिया तथा निम्नस्तरीय होने का फतवा देता है। सामान्य रूप मे असली साहित्यकार अपना लिखा फाइलो मे बाधकर अपनी सोने की चारपाई के नीचे ढेर लगाता रहता है तथा साहित्य को दीमकों को समर्पित करता रहता है।

असली साहित्यकार की यह भी एक अपनी पहचान है कि वह स्वदेशी साहित्य व साहित्यकार की बात नही करता। वह दूसरी भाषाओं तथा देशों के साहित्यकारों की बात करके अपनी विद्वत्ता की छाप छोडता है तथा उन्ही के उदाहरण देकर साहित्य की सार्थकता का बखान करता है। वह अपने स्थानीय समकालीनों को नकारकर आम तौर पर इतनी ऊंचाई पर बैठा रहता है कि उस ऊंचाई को छूना किसी प्रोफेशनल साहित्यकार के लिए सहज नही है। यदि वह उस ऊंचाई को छूने की कोशिश करे भी तो दात-मुंह तुडवा बैठे तथा उसकी गृहस्थी की आराम से चलती गाड़ी चरमराकर टूट जाये। इसलिए असली साहित्यकार की देखा-देखी अमूमन साहित्यकार नही करता है।

विचार-गोष्ठियां असली साहित्यकार का प्रिय स्थल हैं। इन गोष्ठियों का आयोजन तीन साहित्यकार मिलकर भी कर सकते है। पूरे साहित्य की चिन्ता उस समय इन तीनो पर इतने भयंकर रूप से हावी होती है कि ये लोग तनिक भी विचलित नही होते तथा गंभीरतापूर्वक अपने चिन्तन में लगे रहते हैं। उन्हे लगातार यह आभास रहता है कि यदि उन्होंने तनिक भी इस कार्य में लापरवाही बरती तो साहित्य का सत्यानाश तथा बड़ा अनर्थ हो जायेगा। इसलिए गोष्ठियों मे साहित्य तथा अपना स्वय का हाजमा ये लोग निरंतर खराब करते रहते हैं। लेखक-सम्मेलन, विचार गोष्ठी, साहित्य संगोष्ठी तथा भाषण आदि के आमत्रण पर यह जीव प्रफुल्लित होता है तथा अपने स्वयं के किराये से यह उन कार्यक्रमों में शरीक

होता है, क्योंकि किराया उन्हें अपनी पत्नी की कमाई से मिलता है। अतः वे इसके प्रति ज्यादा चिन्तित नहीं रहते। असली साहित्यकार कार्यक्रमों की अध्यक्षता तथा मुख्य अतिथि बनने का भी शौकीन पाया जाता है—वह राजनेताओं की आलोचना करता है तथा उन्हें फूहड़ समझकर अपना औचित्य ठहराता है।

असली साहित्यकार यदा-कदा अनियत कालिक पत्र-पत्रिकाओं तथा छोटे साप्ताहिक पत्रों में छपता है तथा अपनी ही रचनाओं पर बहस करता है। उसकी रचनायें पढ़ने को आम तौर पर साहित्यकार तरसते रहते हैं, और वह है कि उन पत्रिकाओं में रचनायें छपवाता है, जो कहीं भी पढ़ने को नहीं मिलती। वे पत्र-पत्रिकाएं उन्हीं सीमित लोगों के पास पहुंचती हैं जो साहित्य को निरंतर आम साहित्यकार और आम आदमी से दूर ले जाते हैं। एक रचना लिखने के बाद वर्षों तक असली साहित्यकार उसके गुणावगुण का बखान करता है। असली साहित्यकार जो कुछ भी लिखता है बस वही साहित्य होता है—बाकी सब कूड़े-करकट में माना जाता है। वह बुक स्टाल पर बिकने वाली पत्रिकाओं को पढ़ता है, खरीदता है परंतु उन्हें व्यावसायिक मानकर घृणा करता है।

मेहा बरस पिया के देस

हे सलोने मेघ, तुम बरसो—खूब बरसो और इतना बरसो कि मेरे परदेसी प्रीतम के शहर में बाढ़ आ जाये तथा उसे मेरी याद आने की एवज अपनी जान के लाले पड जायें। तुम्हारे बरसने से जहां विरहणियों के हृदय दग्ध हो जाते हैं—वहीं मेरी जैसी नायिकायें इसलिए खुश हैं कि रास्ते अवरुद्ध होने तथा असामान्य स्थिति के कारण परदेसी बालम स्वदेस नहीं लौट पाता है। सच, मैं चाहती भी नहीं कि मनिआर्डर के अलावा वे स्वयं कभी आयें भी। क्योंकि उनके आते ही मैं परतंत्र हो जाती हूं तथा आजादी के लिए तरस जाती हूं। चौके-बरतन, रोटी-पानी बनाने का अभ्यास पिछले अनेक वर्षों से रहा नहीं है। अतः मैं वह आधुनिक नायिका बन गयी हूं जो दिन भर सज-संवर कर होटल में भोजन प्राप्त कर परदेसी प्रीतम द्वारा भेजी राशि का आचमन करती हूँ। मुझे नयी-नयी साड़िया तथा फैशन अपनाने के अतिरिक्त काम के लिए समय नहीं रह गया है। अतः हे काली घटाओं के मालिक घन इतने जोर से बरसो कि सारे आगमन के रास्ते अवरुद्ध हो जायें क्योंकि मेरा बावरा प्रीतम होली-दिवाली-तीज-गणगौर तथा फागुन-सावन मे पारम्परिक रूप से अपनी प्रियतमा के पास आता है। कहीं ऐसा नहीं हो कि इस पावस ऋतु में वह कहीं दो-चार दिन की छुट्टी लेकर यहां लौट आये।

हे बादलों में श्रेष्ठ बादल के टुकड़े, हो सके तुम प्रियतम की छत पर बरसकर अहसास कराना कि यदि वह कमरे से बस स्टैण्ड जाने को निकले तो हालात बिगड़ जायेंगे। फिर भी यदि वह निकलने की हिमाकत कर ले तो तुम ओले बरसाना ताकि वह अपने सिर पर हाथ रखकर पुनः अपने

कमरे पर लौट जाये। परन्तु यह जरूर ध्यान रखना कि जिस समय वह पोस्ट ऑफिस मुझे मनिआर्डर कराने जाये तब तुम मत बरसना। क्योंकि मनिआर्डर नही आया तो यहां मेरी हालत पतली हो जायेगी। इसलिए जब मनिआर्डर कराने जायें तब तुम मौसम को और सुहाना बना देना ताकि वह बरसात के बहाने मनिआर्डर नही भेजने का बहाना नही बना ले। लेकिन हां, जब वह मनिआर्डर करा आवे तब तुम रास्ते में इतने जोर से बरसना कि वह भागता हुआ अपने घर आकर सांस ले।

सुनो वर्षा के बादल, तुम मेरे यहां बरसो इससे कोई फायदा नहीं। क्योंकि मेरे वर्षा-सावन किसी बात से कोई फर्क नही पड़ता। मैं आधुनिका हूं। मुझे कोई पारम्परिक चीज प्रभावित नही कर सकती। इसलिए बरसो तो पियाजी के यहां जाकर बरसो। सुनो एक बात और, मेरे प्रीतम का बास भी बड़ा निखट्टू है हो सके तो कुछ दिन उसके यहां भी बिजलियां कड़का-कड़काकर बरसना ताकि वह दफ्तर नही जा सके और सब आर्डिनेट स्टाफ बिना छुट्टी की स्वीकृति के अपने घरों को जाने का प्रोग्राम न बना बैठें। एक दिन बास से कहना भी कि तुम्हारा स्टाफ अकर्मण्य है, मुफ्त की तनख्वाह लेता है। इससे वह रुष्ट हो जायेगा तथा वह स्टाफ की लम्बे समय तक छुट्टी ग्राट नही कर पायेगा। चूंकि यह मौसम पिकनिक का है—मैं अपनी सहेलियों के साथ गोठ-पिकनिक प्रोग्रामों मे व्यस्त हूं—कहीं प्रीतम आकर मेरे सारे प्रोग्राम चौपट नही कर दें। मजा किरकिरा हो जायेगा—यदि उनके मनिआर्डरों की एवज वे स्वयं आ गये तो? इसलिए श्रेष्ठ घन पियाजी के घर पर जमकर बरसो ताकि वे बाढ़ से घिरकर राहत कार्यों पर निर्भर रह जायें और वेतन का अधिक-से-अधिक भाग बचाकर मुझे भेज सकें।

हे मेहा महाराज, एक दिन रात को जोरों से बरसना और प्रीतम को बताना कि तुम्हारी पत्नी बनाम प्रेयसी तुम्हें कतई याद नही करती है। तुम खूब कमाओ और हीनता बोध से दबे रहकर निरंतर धनादेश भिजवाते रहो। फिर यकायक हंसकर कहना कि आ गये न चक्कर मे—अरे निरे बुद्धू तुम्हारी पत्नी तुम्हें बेहद प्यार करती है—तुम्हारी याद मे दिन-रात आंसू बहाती है तथा तुम्हारी सूरत उसकी आंखों से निकल ही नही पाती

है। परन्तु रास्ते खराब हैं—नदियों में नावें तथा बसें डूब रही हैं—रेल गाड़ियों की पटरियां उखड़ रही हैं—अतः ऐसे मे घर मत लौटना। जिस तरह तुम्हारे शहर पर प्राकृतिक विपदा आयी हुई है—उसी तरह तेरी *नायिका पर क्या बीत रही होगी! कही ऐसा नही हो कि वह भीषण अर्थ* संकट से जूझ रही हो—इसलिए उठ और पोस्ट ऑफिस जाकर टी० एम० ओ० करवा आ।

हे सलोने बादल, पियाजी को यह बात अच्छी तरह समझा दे कि अब स्वदेश लौटने से कोई फायदा नही है—यहा तेरी नही, तेरी कमाई की जरूरत है। नायिका लहरिया ओढ़े—सावन के गीत गाती हुई—बागों मे झूला झूल रही है तथा पोस्टमैन आने के समय मकान के दरवाजे पर खड़ी होकर बेचैनी से राह को टकटकी *लगाकर निहारती रहती है। सहेलियों के* साथ पार्टियों में घूमना—सौन्दर्य प्रसाधनों तथा साड़ियों की खरीद के अतिरिक्त केवल प्रत्येक नयी फिल्म देखने का ही मुझे शौक रह गया है। अब अन्य किसी बात में मेरी कोई रुचि नही रही है। यदि फिर भी पावस-ऋतु मे पिया यहां आना चाहें तो उनके बास को अहसास कराना कि वह कहीं दो दिन से ज्यादा की छुट्टी स्वीकार नही कर दे। दो-तीन दिन तो खैर मैं उनके साथ निर्वाह कर लूंगी—परन्तु ज्यादा लंबा साथ मुझे पीडादायक *होगा—अतः वह भी ज्यादा अवकाश बरबाद नही करे—क्योंकि आजकल* तो 'लीव एनकैशमेंट' का भी नियम है। यहां आने की एवज वह इनका वेतन प्राप्त करे तो वह मेरे ज्यादा हित में है।

इसलिए नीलांबर मे छाये बादलो—यहां से जाओ और परदेसी प्रीतम की कोठरी पर जा बरसो। वह वहां अकेला बैठा रोटियां सैंक रहा होगा। जब वह सब्जी छौंके तब तुम उसे बताना कि भोजन व सब्जी अपने हाथ की ही बनायी हुई स्वादिष्ट व उत्तम होती है। औरतें रसोई को महंगी व *बेस्वाद बनाती है। औरतो को साथ रखना महंगा और त्रासद है। अतः* अकेले जीवनयापन आराम से होता है। यह दर्शन उसके भीतर उतर जाये तो फिर वह स्वय ही यहां आने की बात नहीं सोचेगा। उसे दफ्तर मे रुचि से काम कर बास को खुश करके प्रमोशन हथियाने की कला की तरफ भी तुम प्रेरित करना। इससे उसकी आय भी बढ़ेगी तथा यहां आने की बीमारी

भी मिटेगी। कुर्सी का मोह जग जाने से यह मेरे प्रति मोहभंग करेगा तथा पैसे कमाने वाला भूत बना रहेगा। परन्तु कही ऐसा नही हो कि वह इतना मोहभंग कर बैठे कि मनिआर्डर कराना ही बद कर दे। सच यदि ऐसा हो गया तो मैं घर की रहूगी न घाट की। मेरे सारे नाज-नखरे-खान-पान-रहन-सहन तथा फैशन का मटियामेट हो जायेगा।

स्वयंवर आधुनिक सीता का

राजा जनक पशोपेश में पड़ गये। उन्हें ऐसी आशा कदापि न थी कि स्वयंवर में आये राजागण अचानक हड़ताल कर बैठेंगे। उन्हें लगा इस बार सीता के हाथ पीले करना मुश्किल हो गया है, सीता के लिए आये वर एक ही बात पर अड़े हुए थे कि धनुष तोड़ने की शर्त को कुछ हल्का किया जाये अथवा इसके स्थान पर कोई अन्य हल्की शर्त रखी जाये। अधिकांश राजा राम के भी विरोधी हो गये थे, तथा चाहते थे कि यदि शर्त कुछ कमजोर रखी जाये तो सीता के गले में वरमाला डालने का अवसर उन्हें भी प्राप्त हो।

राजा जनक के पास स्वयंवर पक्ष की यूनियन की ओर से राजागण प्रतिनिधि मण्डल लेकर आये तो राजा जनक ने दो टूक उत्तर दे दिया, 'देखिये धनुष तो तोड़ना ही होगा। यदि यह शर्त न रखूं तो क्या सीता को इतने वरों के साथ भेज दूं या कि राम की एवज किसी ऐरे-गैरे नत्थू खैरे को अपनी लाडली बेटी का भाग्य सौंप दूं?'

प्रतिनिधि मण्डल के सदस्यगणों में से एक बोला, 'आखिर मौका दूसरे को भी दीजिये। राम ने कौन-सा सुख दिया है सीता को। पहले चौदह वर्ष वनवास और फिर आजीवन वनवास। क्या राजा जनक आप इसे ही सुख मानते हैं? सच मानिये हमारे वनवास जैसी कोई स्थिति नहीं आयेगी। हमारी ओर से सीता को पूरा सुख देने की चेष्टा होगी।'

'लेकिन ऐसा हो नहीं सकता, भाइयो। आप लोग समझिये, एक अर्से से चली आयी परम्परा को आखिर एकाएक कैसे खत्म किया जा सकता है।' राजा जनक ने कहा।

'लेकिन हमने कब कहा कि शर्त समाप्त कर दें। परन्तु शर्त हल्की तो की जा सकती है। जैसे धनुष की एवज कोई और चीज तोड़ने की आसान परम्परा का आविष्कार हो।'

'परन्तु आसान शर्त में तो हर कोई आदमी शर्त जीत जायेगा। आखिर सीता तो एक है। आप लोग स्थिति को समझें तथा व्यवधान न डालें। अच्छा तो यह रहे कि आप लोग पाण्डाल में पहुंचकर अपना-अपना जोर आजमायें।' राजा जनक ने अपना निर्णय फिर दोहराया।

कोई समझौता वार्ता नही हो सकी तथा पाण्डाल में आकर राजाओं ने नारेबाजी शुरू कर दी, 'यह मनमानी नही चलेगी !' 'दादागीरी नही चलेगी !' 'हर जोर-जुल्म की टक्कर मे हड़ताल हमारा नारा है !' 'जो हमसे टकरायेगा मिट्टी मे मिल जायेगा !' 'राजा जनक—मुर्दाबाद !' तथा 'स्वयवर के राजाओं की एकता—जिन्दबाद !' आदि नारों से सारा पांडाल गूंज उठा।

विश्वामित्र राजा जनक के पास गये और बोले, 'देखो राजन महल के भीतर बैठने मे पार नही पडेगी। बाहर चलो, यदि भीड ने अभी पथराव-लूटपाट-आगजनी शुरू कर दी तो हिंसा भड़क उठेगी। मेरे खयाल से तुम बाहर चलकर भीड को कोई लोकतान्त्रिक बयान जारी करो ताकि मोब टल सके। ज्यादा तनावपूर्ण माहौल आपके हित मे नही है।'

राजा बोले, 'महाराज, आप कैसी बात कर रहे हैं। इससे ज्यादा लोकतांत्रिक बात और क्या होगी कि धनुष तोड़ो और सीता को प्राप्त करो। जनता के लिए यह खुला दगल है। इसमे जरा कही अलोकतांत्रिक बात मुझे नही दीखती। आप राजाओ को समझायें कि वे अपने पुरुषार्थ से न मुकरें तथा धनुष तोड़ने के काम मे लगें।'

विश्वामित्र बोले, 'बात यह है राजा जनक, दरअसल अब यह भारी-भरकम शिव का धनुष तोडने की सामर्थ्य तो स्वयं राम मे भी नहीं है। वे भी कह रहे थे कि मैं जनक को समझाऊं कि इस कलयुग मे डालडा खाने वाला राम क्या खाकर धनुष तोडेगा? आज के युग में तो राम काच के खिलौने तोड़ सकता है। बर्तन तोड सकता है तथा दिल तोड सकता है। इस बार डर यह है कि धनुष राम की एवज कही रावण नही तोड़ डाले।'

दौड़कर राजा जनक विश्वामित्र के चरणों में गिर पड़े, 'यह आप क्या कह रहे हैं प्रभो, आप राम को समझायें कि धनुष तो उन्हें ही तोड़ना होगा। वरना फटीचर टटपूंजिये राजाओं के चंगुल में फंस जायेगी मेरी लाडली।'

'लेकिन राम कहते हैं कि रोज-रोज वनवास और सीता की खोज तथा रावण से लड़ते-लड़ते वे परेशान हो गये है।'

'लेकिन इसमें सीता का क्या दोष है महाराज। राम पिता के कहने पर वनवास जाते ही क्यों हैं। एक बार—दो बार हो जाये, हर साल राम-लीला के दिनों में राम को वनवास मिल जाता है। जिसमें मेरी पुत्री को अलग दुखी रहना पड़ता है। राजा दशरथ जैसा बेवकूफ राजा मैंने नहीं देखा। कैकयी के कहने पर राम को वनवास दे डालते हैं। वह तो राम मान रहे है किसी दिन पलटकर जवाब दे देंगे तो मुह ताकते रह जायेंगे। आप राम को समझायें कि नारी पर यह अत्याचार अब ज्यादा दिन नहीं चलेगा', राजा जनक ने विश्वामित्र से कहा।

'लेकिन तुमने दहेज में दिया क्या है जनक। इस युग का राम दहेज के अभाव में सीताओं पर यों ही अत्याचार करता रहेगा, मैंने राम से कहा तो बोले, गुरुजी फायदा क्या है इस स्वयंवर में जाने से, न टीवी, न फ्रिज, न स्कूटर और न धन-दौलत। जनकजी हर बार यों ही टाल देते हैं। इस बार इन्हें मजा चखाना है। तुम्हारे सामने धर्मसंकट है। इधर दूसरे राजाओं ने धनुष के हाथ लगाने से इन्कार कर हड़ताल कर दी है—वहीं राम ने दहेज की मांग खड़ी कर दी है। ऐसी स्थिति में तुम्हारी हसी होगी। अच्छा तो यह हो कि राम को खुश कर ही दो।' विश्वामित्र ने चाल फैंकी।

'लेकिन यह सरासर अन्याय है। दहेज कानूनन अपराध है, अभी केस बनवा सकता हूं मैं इस मामले को लेकर।' जनक बोले।

'खूब बनाओ केस राजा। परन्तु याद रखो राम अभी लौट जायेंगे। पता भी है यह शिव धनुष तोड़ना हसी खेल नहीं है।' विश्वामित्र ने कहा।

'तो क्या शर्तें हल्की करने पर राम दहेज नहीं लेंगे ?'

'हल्का ही दहेज हो जायेगा, ऐसा करो जब तक दूसरे राजा कोशिश करें तब तक वहीं धनुष रखा रहने दें—परन्तु ज्यों ही राम जायें—धनुष

वोट बैंक संकर सरपंच का

जब से चुनाव होने की घोषणा हुई है, मेरे गांव का परसादीलाल नाचा-नाचा फिर रहा है। वह सफेद कुरता-पाजामा पहने इतरा रहा है और अब यह भी मानकर चल रहा है कि उसे किसी न किसी दल से टिकिट जरूर मिल जायेगा, फिर तो वह भी गरीबी मिटाने के लिए कुछ कारगर काम कर सकेगा। परसादी एक दिन मेरे पास आया और बोला, 'बाबूजी, मेरा फोटू अगर अखबार में छपवा दो तो मुझे टिकिट मिल जाये।' मैंने कहा, 'लेकिन तुम्हारा फोटो अखबार में छपने का आधार क्या होगा? फिलहाल तो सिर्फ विज्ञापन का पैसा देकर ही तुम्हारा फोटो अखबार में छप सकता है।' और आखिरकार उसने विज्ञापन देकर अपना फोटो और वक्तव्य दोनों ही एक लोकल अखबार में छपा डाले।

उसका फोटो छपने के बाद पार्टी के कुछ लोग उसके घर पहुंचे और उसके सामने चुनाव प्रचार अभियान का जिम्मा लेने का प्रस्ताव रखा। परसादी पहले तो उम्मीदवार बनने की जिद पर ही अड़ा रहा लेकिन बाद में बीवी-बच्चों के समझाने पर वह प्रचार कार्य में अपने क्षेत्र का ठेका लेने को राजी हो गया। अब परसादी भाषण मारता रहता है और दनादन झूठ बोलता है। वह जिस उम्मीदवार का प्रचार कार्य कर रहा है, वह पहले तस्कर था। इधर उसके हृदय में जनसेवा का भाव जाग गया है— और इस पुनीत कार्य के निमित्त उसने राजनीति को ही अपना जरिया बनाया है।

परसादी आजकल घर नहीं आता। वह जीप में सवार झंडा उठाये बेतहाशा तावड़तोड़ जल्दी में रहता है। उसे कतई फुरसत नहीं है। दो बात

करने का यत्न नहीं है। यह तो लगभग 'सरकार' हो गया है और पूरे माल भर की रोटी की जुगाड़ में लग गया है।

हमारे गाव की छिपी हुई असलियत तो यह है कि विरोधी पार्टी के नेता इस बार चुनाव चाहते ही नहीं थे। जब तक चुनाव की घोषणा नहीं हुई थी तब तक तो 'लोकतंत्र पर खतरा है' का नारा लगा रहे थे और अब, चुनाव तिथियों की घोषणा होते ही उनकी सिट्टी-पिट्टी गुम हो गयी है। दलित मजदूर किसान पार्टी, भाजपा, जपा तीनों ही दलों की स्थिति बड़ी नाजुक है। नाड़ी नदारद है, दिल की धड़कन का पता ही नहीं चलता। इनके मतदाता भी ढूंढे ही मिलते हैं। इन दलों के बड़े-बड़े लीडर यहां पधार चुके हैं, जिनके भाषण सुनने चुनावी श्रोता उसी अंदाज में पहुंचे, जैसे हास्य फिल्म को देखने फिल्मी दर्शक पहुंचते हैं। लोग यह कहने लगे हैं कि राजनारायण के सम्पर्क में जो भी रहा, वही राजनारायण हो गया। नतीजा आपके सामने है। विपक्ष में इतने राजनारायण हो गये हैं कि परनादी बेचारा गिन ही नहीं पाता।

सुना है पचास करोड़ रुपये दिल्ली की कायाकल्प के लिए प्रधानमंत्री ने स्वीकार किये हैं, बड़ा दुःख हुआ है—बाकी देश का क्या होगा? दिल्ली के वोटों से उनका काम चल जायेगा क्या? इस बात को लेकर यहां कार्यकर्ताओं में बड़ा असंतोष है। उनका कहना है कि केवल ढाबे में दाल फ़राई और तंदूरी रोटियों के दम पर प्रचार का काम कैसे हो सकता है? अगर ऐसी ही राहत राशि इधर भी आ जाती तो इन बेचारे कार्यकर्ताओं की बन आती और वे भी लक्ष्मी की बहती गंगा में हाथ खंगाल लेते। इस लिहाज से कांग्रेस की स्थिति मतदाता की तरफ से तो विश्वसनीय है—परन्तु कार्यकर्ताओं में जनमी धड़ेबन्दी की कोई रामबाण दवा अभी मिलना मुहाल है। पार्टी अध्यक्ष श्री राजीव गांधी को कोई हमारी बात कान में फूंक दे कि मामला चुनाव का है, थोड़ा सावधानी से काम लें। ज्यादा अतिरिक्त आकलन न करें और अपने ऐसे 'निष्ठावान' कार्यकर्ताओं से दो-चार गज के फासले पर ही रहें।

एक दिन इधर मेनका गांधी के भी आदमी आये थे, यह जानकारी करने कि क्या उनका उम्मीदवार यहां से खड़ा किया जा सकता है। मत-

दाताओं ने उन्हें भी घेर लिया और कहा कि 'जरूर सा'ब—अवश्य खड़ा करिये—अच्छे मतों से जीत जायेगा।' बड़े उत्साह से ये लोग लौट गये। बाद में सारे लोग देसी ठहाका मार-मारकर हंस रहे थे और कह रहे थे कि कोई तो दल ऐसा भी होना चाहिए, जिसकी जमानत जब्त हो सके।' आपसे सच कहूं—गांव का भोला-भाला कहा जाने वाला देहाती अब इतना चालाक और चतुर हो गया है कि यह समझना मुश्किल है कि वह क्या गुल खिलायेगा।

एक बात और, संकर सरपंच के तो ठाठ ही हो गये है। वह गांव भर का 'चीफ मिनिस्टर' हो रहा है। बाहर से जो भी नेता आते है—उसको बड़ा सम्मान देते हैं। वह फूला नही समाता। कभी कहता है, 'पी० एम० के यहां जाना है'—कभी कहता है, 'सी० एम० के यहां जाना है।' लोग बड़े परेशान हैं उसकी हरकतों से। अपने इलाके के लोगों पर खामखाह रौब गांठता रहता है। जिस सत्तारूढ़ दल के उम्मीदवार ने उसे अपना ठेकेदार बनाया है, उसके लिए वह वोट मांगता नहीं—पूरी दादागीरी से उसे वोट देने के लिए मतदाता को हड़काता है। उसने गांव के विकास कार्य रोक दिये हैं। बिजली की कटौती करवा दी है—जिससे किसान बड़ा परेशान है। आज तक सुना तो यही था कि वोट लेने के लिए सरकार नयी-नयी घोषणाए और काम करवाती है। संकर सरपंच नाम के इस महारथी ने उल्टा कर रखा है। पूरी दादागिरी मचा रखी है। चेहरा दिन-दिन कंचन की नाईं दमकता जा रहा है। उसके मकान की तीसरी मंजिल चढ़ रही है और नये-से-नये फैशन का मकान महंगे-से-महंगे सामान से बनवा रहा है। पता चला है कि उसे 'विशेष राहत' प्रदान की गयी है क्योंकि वह सरकार का वोट बैंक है—इस चुनाव क्षेत्र का।

मगर फिर भी स्थिति समझ से परे है। चुनाव की तमाम नावों में पानी भर रहा है और पता नही कब किसकी नाव पानी भरने के बाद डूब जाये। मतदाता ने हालात बड़े उलझनपूर्ण बना दिये हैं। विश्वास करिये पार्टियों की छवि इतनी साफ सुथरी है कि इधर मतदान का प्रतिशत तीस ही रहेगा। इधर के लोग सोच रहे हैं कि क्या एक दिन की यात्रा के लिए महामहिम राजनारायणजी हमारे यहां आ सकते है—बच्चों में उन्हें देखने की तथा

वहाँ से उन्हें सुनने की बड़ी उत्कंठा जगी हुई है। वाकई, राजनीति में हमें आदमी एक ही पसन्द आया है और वह हैं श्री राजनारायण—जो सब कुछ साफ कहते हैं—वाजपेयीजी तो कुछ इतने गम्भीर हो गये हैं कि मतदाता भी उनके प्रति उतना ही गम्भीर होता जा रहा है। रहा श्री चरणसिंह का सवाल—तो वे साठ से ऊपर पहुंच चुके हैं और हमारे गांव में साठा का लिहाज तो सब करते हैं मगर उससे कोई पाठ नहीं सीखते। लेकिन पाठ तो हमने जब इतिहास तक से नहीं सीखा तो इनसे क्या सीखना। अभी इतना ही···लिखा थोड़ा समझना बहुत।

सौ बरस

गौरीशंकरजी बेहद उदास थे। गहरे विषाद में उनके नयन खोये हुए थे। मैंने दुखती रग पर हाथ धर दिया, 'क्या हुआ, इतना उदास तो तुम्हें पहले कभी नही देखा, गौरी दादा।'

'तुम्हें पता नहीं परसों दादाजी के सौ बरस पूरे हो गये।'

यह सुनते ही एक पल को मुझे सांप सूंघ गया। बोला, 'बड़े दुख की बात है। लेकिन उम्र तो यही कोई साठ-सत्तर थी और सौ बरस भी पूरे हो गये।'

'मृत्यु के आगे किसकी चलती है शर्मा भाई। मैं सोच रहा था कि इक्कीसवीं सदी तक तो पहुंच जायेंगे दादाजी। परन्तु हाय री किस्मत अनहोनी हो गयी?'

'लेकिन सौ बरस जिसके पूरे हो जाते है—उस पर तो जश्न मनाया जाता है—समारोह आयोजित होते है—लेकिन तुमने मुह इस कदर लटकाया है कि सीधा होने का नाम ही नही ले रहा। अमां यार देखो कांग्रेस ने भी सौ बरस पूरे कर लिए। देखो तो सही इस अवसर पर कांग्रेसी कितने घूमधाम कर रहे हैं।' मैं बोला।

'बहुत बरबादी हो रही है यह तो। करोड़ों रुपयों को बरबाद किया जा रहा है।' गौरीशंकरजी के स्वर में बेहद पीड़ा थी।

'बरबाद नही गौरीशंकरजी, हमारा देश परम्परावादी है। जैसे किसी व्यक्ति के सौ बरस पूरे होने पर बारहवीं पर हजारो रुपया व्यय होता है वही सिलसिला है यह भी। कांग्रेस ने सौ बरस पूरे किये तो बारहवीं आयोजन घूमधाम से ही होना चाहिए। पता भी है—जिसका बाप या

सौ बरस पूरे कर लेता है—वह बेटा तभी सपूत कहलाता है, जब वह उसकी बारहवी पर लुट-पिटकर बडी शान-शौकत से बारहवी कर दे। फिर कांग्रेस के तो एक नही अनेक 'सपूत' है।'

'लेकिन इतनी बरबादी ?'

'देखो बुरा मत मानना। क्या दादाजी की मृत्यु पर तुमने हरिकीर्तन नही करवाया ? क्या तुमने चदन का इन्तजाम नही किया ? देसी घी का इन्तजाम नही किया ?'

'वह तो सभी करना पडता है।'

'वही कांग्रेस के साथ हुआ है। इक्कीसवी सदी में जाने से पहले हर पुरानी चीज के सौ बरस पूरे करके नागरिकों मे नई चेतना जगानी है। दादाजी नही रहे तो अब थोडी-बहुत जिम्मेदारी तुम्हारे ऊपर भी तो आई है।'

'लेकिन रोना भी तो इसी जिम्मेदारी का है', गौरी दादा ने गहरी सास ली।

'जिम्मेदारी से घबराना ठीक नही है। मेरी राय में दादाजी ने ठीक समय पर तुम्हारी आंखे खोल दी। यह भी हो सकता है कि तुम्हारी लापरवाही तथा बदतमीजी से परेशानी महसूस करके उन्होने अपनी आखें बन्द कर ली हो। तुमने कम दुखी नही किया है गौरीशंकरजी उन्हें।'

'आखिर तुम कहना क्या चाहते हो। क्या कांग्रेस और दादाजी मे काफी साम्य है ?' उन्होने पूछा।

'नहीं भाई कांग्रेस और दादाजी दो अलग-अलग इकाई है। कांग्रेस लाखो कार्यकर्ताओ का पेट पालन करती है। परन्तु दादाजी ने फकत तुम्हारे लिए जीवन जिया है। इसलिए दादाजी और कांग्रेस मे उतना ही फर्क है जितना केन्द्र और राज्य मे', मैं बोला।

'लेकिन एक बात बताओ शर्मा। चारो तरफ शोर है कि इस शताब्दी का सबसे भीषण अकाल पडने वाला है, फिर इस शताब्दी समारोह का अर्थ क्या है ?'

'आप राजनीति नही समझेंगे, गौरी दादा। अकाल अपनी जगह है और कांग्रेस की यह प्रदर्शनी अपनी जगह। प्रदर्शनी भी एक तरह से राहत कार्य

है। लाखों राजनेता और उनसे जुड़े जीव राहत की पजीरी फांक रहे हैं। यह उच्चस्तरीय बंदरबांट है—जिसकी चकाचौंध में नम्बर 'ए क्लास' के लोग लाखों लूटते हैं। अकाल में घास-फूस बटता है। रोटियां और सूखा अनाज मिलता है। प्रदर्शनी हमारी पुरानी परम्परा है—इसलिए प्रदर्शनी अनिवार्य है।' मैंने समझाना चाहा।

गोरी दादा इस बार बोले, 'लेकिन जैसे दादाजी ने सौ बरस पूरे किये तो इसका जश्न आयोजित करने का जिम्मा अकेले मेरे ऊपर है। क्या थोड़ी-बहुत राहत सामग्री सरकार से नहीं मिल सकती ?'

'जी नहीं, दादाजी गैर सरकारी जीव थे। उनके हर काम की जिम्मेदारी आप पर है। फिर कांग्रेस की प्रदर्शनी में तो हश्र अनूठा हुआ है।'

'कैसे ?'

'तूफान आया और सारी ढाणियों को उजाड़ गया। सारे स्टाल्स सौ बरस पूरे कर बैठे। कमाने के लिए आये सौदागर जार-जार रो रहे हैं। जैसे तुम दादाजी के सौ बरस पूरे होने पर रोये उसी तरह प्रकृति के साथ-साथ निजी क्षेत्र के प्रतिष्ठानों के संचालक रोये। इतना रोये कि तंबू-डेरे समेटकर घरों को लौटने की सोचने लगे।'

'तुम बातें दोनो ही तरह की करते हो शर्मा। कभी दादाजी की मृत्यु को खुशी का अवसर बताते हो तो कभी रोने को प्रेरित करते हो, आखिर मामला क्या है ?'

'मामला इतना-सा है कांग्रेस नये रूप में नयी सदी में जायेगी। पुराना लिबास उसने उतार फेंका है। स्वतंत्रता सेनानियों को पेंशन देकर सेवा-निवृत हो जाने दो और नयी पीढ़ी को नागपुर से मास्को तक की रंगीली हरकतों में डूब जाने दो। मिस्टर क्लीन अच्छी छवि के लोगों की तलाश में बीसवीं सदी को छलांग लगाना चाहते हैं और यह मरी है कि कहीं-न-कहीं नया बखेड़ा खड़ा कर डालती है गौरीशंकरजी।'

गौरीशंकरजी इस बार शायद बात का मर्म समझ गये थे अत: बोले, 'समझ गया, दादाजी के सौ बरस पूरे होना मेरे हित में है तो कांग्रेस के सौ बरस पूरे होना राष्ट्र के हित में है।'

'नहीं···नहीं···यहीं आप फिर गलती पर हैं—राष्ट्र के लिए हानि है·

…जबकि कांग्रेसियों के लिए लाभ है। अब वे किसी सिद्धांत-विद्धांत के पचड़े में नहीं पड़ेंगे। उन्हें सारी नैतिक मान्यताओं को तिलांजलि देकर नयी सदी में जाना है—इसलिए कांग्रेस के सौ बरस पूरे कर दिये गये हैं। बुर्जुआ ख़यालों में जीना प्रगतिशीलता नहीं हो सकती। उसे तो आख़िर नये की ख़ातिर दफनाना ही पड़ेगा। कांग्रेस शताब्दी में तूफान का आना इक्कीसवीं सदी के शुभ संकेत हैं।

बरसे टैक्स मेह की नाई

होनी को कौन टाले। जो सावन आये तो इस बार आशा जगी थी कि इस बार रिमझिम फुहारों के बीच आनन्द की सरगम खूब बजेगी। परन्तु बीच में ही कहर बरपा दिया और सावनी ठण्डी फुहारों के मध्य टपक पड़े —टैक्स। जैसे इस बार एक सावन बरखा बरसने के लिए है तो दूसरा टैक्स बरसाने के लिए। सावन जो हृदय में आग लगाता है—प्रेम की मंदाग्नि धधकाता है और विरहाग्नि में सुलगाता है प्रेमी-प्रेमिकाओं को। सारा मामला चौपट हो गया—टैक्सों की मार से सारा शरीर एक चिता में जल रहा है। नायक-नायिका सावन का महात्म्य भूल गये और याद रह गया महंगाई का बढ़ता दायरा।

पहले ही पता था—चुनाव के समय मार्च में जो टैक्स नहीं लग पाये वे सावन में रिमझिम-रिमझिम बरसेंगे। पहले दिखायी राहत और अब आफत। तौबा···तौबा···कैसे बसर होगी जिन्दगानी? कछुआ चाल से चली सरकार ने टैक्स लगाये खरगोश की चाल में भी तेज गति में। बिजली महंगी कर दी। अब यह कौन पूछे कि बिजली है कहां? शहरों को छोड़कर —गांव तो पिछले दो साल से अंधेरे में सो रहे हैं। खेत के कुए को बिजली नहीं है तो प्यास से तड़प रहे हैं। जिस-दिन बिजली आयी तो एक-दो लोगों की जान ले बैठी और अब तो दाम बढ़ाकर तमाम रोशनी प्राणियों की जान का ही सौदा कर बैठी। इस देश में रोशनी महंगी होती जा रही है और इस अफरा-तफरी में अंधेरे की बन आयी है। भ्रष्टाचार का दैत्य दिन-दूना रात चौगुना पनप रहा है।

मानसून की बरसात नहीं हुई तो टैक्सों की बरसात ही कर दी। मरो

तो ढंग से मरो। विना बरसात मरते—इससे बढ़िया टैक्सों की फुहारों के बीच दम तोड़ो तो बात बने। कर्मचारी ने डी० ए० मांगा—सरकार ने कहा—ले लो, एक नहीं पांच किस्तें एक साथ। फिर वसूल कर ली एक साथ दस किस्तें। बाजार भाव ऐसे बढ़े कि कुछ समझने की शक्ति ही नहीं रह गयी है। जितना सोचो—तकलीफ घटने की बजाय बढ़ती ही चली जाती है। परन्तु एकता और अखण्डता के लिए हमें ही तो बलिदान देना है। इस-लिए 95 करोड़ के घाटे के लिए राष्ट्रीयता के नाम पर जितना करें वह कम है। हमें तो हर हालत में सरकार के खजाने की पूर्ति करनी है। भाई, इसके अलावा अब और कुछ किया भी तो नहीं जा सकता। चुनाव अभी पांच साल बाद होने वाले हैं। बड़ी आशाएं बंधी थी कि विपक्ष बड़ी शक्ति रूप में विधानसभा में स्थान पा सका है। पर पानी फिर गया। नक्कारखाने में नगाड़े बजाओ, सारे आंकाओं ने तो कानों में रुई ठूंस रखी है। शर्म···शर्म ···के नारे लगाओ—लगा लो, राज्य के विकास के लिए करों का लगाया जाना नितांत जरूरी था—अत: कर लगाये गये। सरकार चलाने में जितने और रुपयों की जरूरत है वह मुख्यमंत्री अथवा मंत्रीगण अपनी जेब से थोड़े ही देंगे।

विनोदीलाल मेरे घनिष्ठ हैं। बजट में नये करों की बात सुनी तो मुंह से आग उगलने लगे, 'अरे यार देख लिया सब। हम तो पहले ही कहते थे कि इनके बस की बात नहीं है—सरकार चलाना कोई मामूली खेल नहीं है। सारी चोटें मानव समाज को नष्ट करने के लिए की जा रही हैं। सच मानो तो शर्मा, किसी कुएं में एक साथ कूद लें।'

मैं बोला, 'कैसी कापुरुषों जैसी बातें कर रहे हो विनोदीलालजी। कुंए में गिरें वे जो टैक्स की चोरी करना चाहते हैं। हमें तो अपने शरीर का एक बूंद रक्त बचे रहने तक भी कर का चुकारा करते रहना है। देखिये हम-आप आम आदमी हैं। आम आदमी की यह जिम्मेदारी और कर्तव्य है कि वह सरकार के सहज संचालन में तन-मन से नहीं तो कम-से-कम 'धन' से तो पूरी तरह मदद करे।'

मेरी बात पर विनोदीलालजी ने माथा ठोक लिया, 'इस देश का इसी-लिए तो भट्ठा बैठ गया। तुम्हारे जैसे लोगों ने बिगाड़ दिया सारा माहौल।

अरे जुल्म बरदाश्त करने वाला सबसे बड़ा अपराधी होता है और तुमने इसे नियति मान लिया है। कुछ पता भी है बाजार भाव क्या चल रहे है ?'

मैंने कहा, 'बाजार भाव मनमानी के चल रहे है । यह हमारे व्यक्ति स्वातंत्र्य का द्योतक है । किसी पर किसी तरह का कोई प्रतिबन्ध नही—चाहे जैसा करो। काला धन्धा करो। तस्करी करो या कोई दूसरा दो नंबर का धन्धा करो। शेयर पहुंचाते रहे—समझो गलत काम करने का लाइसेंस मिल गया। आदमी का कोई जमीर नही रहा। नैतिकता तो यही है कि जैसा आप चाह रहे हैं—उसके लिए रिश्वत-भ्रष्ट तरीकों का सहारा लेकर अपना काम बनाते चलो । दूसरों की चिंता करोगे तो अपना चैन अलग छिन जाने वाला है। क्षुद्र स्वार्थों की राजनीति इतना बढ़िया खेल है कि जीवन मरसब्ज बना रहता है ।' मैं बोला ।

विनोदीलालजी के माथे पर सल पड़ गये। मुंह को अजीब तरह से विचकाया तथा हाथ नचाकर बोले, 'वाह, वाह···क्या कहने। अब क्या चिन्ता है ? देश को गर्त में ले जाने की सारी तैयारी पूरी हो चुकी है, फर्क है या विलंब है तो केवल इतना कि नेताओ के इस कृत्य में हम कहां तक भागीदार बन पाते हैं।'

'छोड़ो भी इतनी गरिष्ठ बात को। पता भी है—बरसात नही होने से सरकार कितनी खुश है ?' मैंने कहा।

'पता है, राहत की पंजीरी सूखे और अकाल मे ही तो बटती है। मानसून समय पर पर्याप्त रूप में आ गया तो अनेक समस्याएं स्वतः हल हो जायेंगी। तथा ऐसे मे सरकार क्या कर पायेगी सिवाय हाथ पर हाथ धरे रहने के। राहत कार्यों मे जितनी आमद लाखों मे बटोरी जाती है—वैसी तो अन्य किसी माध्यम से नहीं खीची जा सकती है। फिर चुनाव जीतने हैं इसलिए भ्रष्टाचार का दशानन दबादब चेहरे पर चेहरे लगाये जा रहा है', विनोदीलालजी ने दर्शन समझाया।

'वाकई आपकी दृष्टि तो काफी परिपक्व व दूरदर्शी है। सावन में लगी आग बरसात ही बुझा सकती है—पर आग जलती दिखे तभी तो। यहां तो आग दिलों के भीतर लगायी गयी है। यह आग कैसे बुझेगी, कोई नही जानता ? हो सकता है मृत्यु के आलिंगन मे ही इससे निजात मिले।' मैंने

कहा तो विनोदीलाल चीखे, 'आग लगे सावन को। अब कैसा सावन और फागुन। विधानसभा जनसामान्य के विकास के लिए संसाधन जुटाने में लगी है—इसलिए मुंडन संस्कार होना ही है। लोकप्रिय सरकार गिरने से पहले ऐसे ही कृत्य करती है। जन अदालत में मामला आयेगा तब चारों खाने चित्त मिलेंगे।'

'अरे छोड़िये भी विनोदीलालजी। कुछ नहीं होने वाला। आवश्यकताओं को और सीमित कर लो। मसलन दो वक्त रोटी खाते हो एक वक्त खाने लगो—फिर बताओ भला टैक्सों से घर की व्यवस्था पर क्या प्रभाव पड़ा? केवल स्वास्थ्य पर प्रभाव पड़ता है—जिसके लिए फिक्र करना फिजूल बात है। रिमझिम-रिमझिम बरसे टैक्स—इसकी फुहारों में भीग लो। बच जाओ तो शुक्र वरना करों का भुगतान करते हुए मरना तो सर्वथा राष्ट्रहित में है', मैं बोला।

गरीब को उठाना है

देश के तमाम राजनेता इस बात पर एक मत हैं कि गरीबों को उठाना है। नेताजी मिले तो मैंने कहा, 'क्यों साहब, यह तो आप लोग अपने भाषणों मे आम तौर पर कहा करते हैं कि गरीब को उठाना है, तो इसका तात्पर्य क्या है ?'

'गरीबों को उठाने का मतलब गरीबी मिटाने से है। इन्हें उठाये बगैर गरीबी नहीं मिट सकती।'

'तो क्या आप यह कहना चाहते है कि गरीब को उठाकर इस देश से *बाहर समन्दर मे डाल देना है, या उसे चार कंधे देने है अथवा उसका वोट* हथियाना है, गरीब आदमी तो वैसे ही आपको वोट देने को विवश है।'

'इसीलिए तो उसे उठाना है, मेरा मतलब यह है कि वह हमे वोट दे तो क्या हम खुशी में पागल होकर उसे शाबासी रूप में भी नही उठा सकते। जब तक लोकतन्त्र है तब तक गरीब को उठाया जाता रहेगा।' वह बोला।

मैंने कहा, 'यह ठीक है कि गरीब को उठाना है, परन्तु आपके पास गरीबी के अलावा भी कोई विषय है, जिस पर बातचीत की जा सकती है ?'

'गरीबी ही देश की एकमात्र ज्वलंत समस्या है। गरीबों के देश मे अमीरों की बात करना भी तो उचित नही है। उसमें पूंजीवादी, असमाजवादी तथा अलोकतान्त्रिक होने की तोहमत लग सकती है। इसलिए प्यारे भाई, गरीबों के मुल्क में हमें गरीबी से सरोकार रखना ही पड़ेगा।' उसका जवाब था।

'दरअसल आपका फरमाना वाजिब है। देश में बढ़ती महंगाई ने गरीब की कमर तोड़कर रख दी है। इसीलिए वह बुरी तरह गिर पड़ा है। ऐसे

में भी यदि वह गिरा रह गया तो गिरा माना जायेगा। भारतीय गरीब की मौलिक पहचान गरीब होते हुए भी खड़े रहना है। वह इतना गिरा हुआ गरीब नहीं है कि गिरा हुआ ही रह जाये।'

मेरी इस बात पर नेताजी हिनहिनाये, 'अरे अब समझे गरीबों के सरदार तुम मर्म की बात। गरीब को न तो आराम करने देना है और न सोने देना है। उसे अपनी गरीबी के खिलाफ निरन्तर संघर्ष करते रहना है—अतः उसका हाथ पर हाथ धरे रहना ठीक नहीं है—इस दृष्टि से भी बैठे हुए गरीब को उठाना है। जो गरीब बैठ गया—वह गरीब नहीं अमीर है। गरीब की सही पहचान यही है कि वह निरन्तर मेहनत-मशक्कत करता रहे। इससे सरकार को पता रहता है कि कौन गरीब है अथवा कौन अमीर है। यदि गरीब को अपने को उठाना है तो यह आभास निरन्तर कराना होगा कि वह आराम से बैठा हुआ नहीं है।'

'वाकई बात तो नेताजी आपने मार्के की कही है। परन्तु क्या इस देश में गरीबी का उन्मूलन कभी संभव भी होगा?' मैंने शंका रखी।

'तुम्हें तमीज कब आयेगी? यह देश गरीब है, इसकी यही पहचान है। यदि गरीबी मिट गयी तो गरीब उठाने का कार्यक्रम खत्म हो जायेगा। जन-सेवा का क्या होगा? इसलिए गरीबों के मुल्क में गरीबी का अस्तित्व तब तक जरूरी है—जब तक यह वर्तमान समाजवादी, कल्याणकारी सरकार मौजूद है। जो लोग गरीबी मिटाने की बात करते हैं—वे गरीबी के दुश्मन हैं। गरीबी मिटानी नहीं, उठानी है यानि बढ़ानी है। तभी हम संख्या में ज्यादा होंगे तथा देश का नाम रोशन होगा।' नेताजी ने फिर वक्तव्य बदला।

'देखिये, आप विरोधाभास कर रहे हैं अपनी बातों में। गरीबी बढ़ने वाली बात इससे पहले गौण थी—जो अब उपस्थित हो गयी है, जरा खुलासा करिये।' मैंने कहा।

'विरोधाभास मेरे जीवन का ढंग है। देखो भाई, मैं अपनी एक बात पर नहीं टिक पाता। निरन्तर झूठ पर झूठ बोलकर मुझे अपने आपको बचाना होता है। मसलन मेरे बीमार गरीब को उठाकर गले लगा लूंगा तो उसका वोट नहीं मिले, हो नहीं सकता। इसलिए गरीब को गले लगाना

मुझ जैसे जनसेवक का पुण्य कार्य है। काश, मैं भी गरीब होता। लेकिन मैं गरीब से अमीर हो गया। न चाहते हुए भी युग की व्यवस्थाओं ने मुझे लखपति बना दिया। मेरे सफेद कलफदार कपड़ों की चमक-दमक में इतने फरेब छिपे है कि थैलियों मे मुद्राएं आती रही और मैं गरीबो को उठाने का गीत आलापता रहा। गरीब उठे कि बैठे कि गिरे, मैं जरूर उठ गया। ऐसा उठा कि दूसरो पर सवार होकर पिद्दी बन बैठा। अब वे उठें तो कैसे ?'

'कुछ समझ में नही आ रहा नेताजी आपका आलाप ? क्या कहना चाहते हैं आप ?' मैंने पूछा।

'तुम समझ नहीं सकते बच्चे मुझे। मेरा रूप बहुरंगी है। इसलिए तो लोग लोहा मानते हैं मेरा। मुझे समझ जाये तो मैं चुनाव में हार जाऊ, मंत्री नही बन सकू और रातों-रात गरीब बन जाऊ इसलिए इस ऊहापोह को बनाये रखने के लिए मैं 'गरीबों को उठाना है' गीत आलापता हू।'

मैं नेताजी का मुंह ताकता रह गया। नेताजी गरीबो को भूमि के पट्टे तथा ऋण बाटने मे मशगूल हो गये ताकि उनसे गरीब उऋण होकर उठ नही सकें। उनके बोझ से दबे रहें। मैं सारी चालाकी समझने की कोशिश करने लगा। परन्तु इतना ही समझ पाया कि इस देश में गरीब को उठाने का कार्यक्रम बदस्तूर जारी है—ऐसे में जबकि चुनाव नजदीक हों तो कहना ही क्या!

एक नेता की आत्मकामना

नये साल का अभिनंदन इस बार कई मायनों में मेरे लिए अर्थवान रहा। पहला तो यही कि चुनाव जीत गया और विरोधी चारो खाने चित्त पड़ा है। नये साल के दिन जो चीज प्राप्त होती है—माना गया है वह जीवन-भर तक सुलभ रहती है। कुर्सी नये साल में मिली है—संभव है अब कुर्सी मेरे पास बराबर बनी रहे। कुर्सी तो वैसे घर मे मेरे पास है, परतु उसकी कीलें चुभने लगी थी तथा उठते-बैठते वह आवाज करने लगी थी। उसकी चीत्कार ने ही मुझे यह कुर्सी हथियाने को प्रेरित किया। फिर मेरे एक निकट संबंधी राजनीति में है। एक दिन उन्होने ही बातों मे इस मरी कुर्सी की चर्चा की थी—बस तभी से यह लिप्सा मन में घर कर गयी थी। विरोधी चुनाव हारा है तो वह अब जीवन भर हारता ही रहेगा।

लोग मुझे नये साल के साथ चुनाव की जीत की भी मुबारकबाद देने आये थे। फूलमालाओं, अभिनंदनपत्रों तथा विजयोल्लास से घर भरता जा रहा था। रह-रहकर मन मे पिछले चुनाव का नजारा घूम रहा था, जब मैं कुर्सी की ललक मे चुनाव के मैदान में धराशायी होकर मक्खियाँ उड़ा रहा था। न कोई नये साल की मुबारकबाद देने वाला था और न ही हार पर ढाढस बधाने वाला था। सारे लोग उस मरदुए के घर चले गये थे—जो चुनाव मे जीता था। समय की बलिहारी, इस बार मैं जीत गया।

यहाँ प्रश्न मात्र जीत का या हार का ही नही, लोकतंत्र की बुनियाद का भी है, नये साल में जो स्वच्छ एवं उन्नत प्रशासन देश को मिलेगा, वह नागरिकों के सर्वथा अनुकूल एवं पूर्णतः राष्ट्रहित मे होगा। यह नया साल आम आदमी के लिए भी खुशहाली लेकर आया है। सभी पार्टियों ने अपने-

अपने वायदे किये, लेकिन उसे मेरे ही वादे पर ऐतबार आया। मेरी पार्टी ने कहा, 'विकास चाहते हैं या ठहराव', 'प्रगति चाहते हैं या पतन', 'खुशहाली चाहते हैं या गरीबी', 'समता चाहते हैं या विषमता' और 'एकता चाहते है या अलगाव', बस फिर क्या था—मतदाता ने पता नही क्या सोचा। दो मे से क्या चाहना है यह बताये बिना उसने वोट हमे दे दिया। अब यह हम पर निर्भर करता है कि हम उसे प्रगति दें या पतन। मतदाता के मौन पर जो हमारी विजय हुई है, उसका मतलब हमने यह माना है कि वह हमारे नारो की दोनों बातें पसंद करता है। इसलिए नये साल में हमारी कोशिश होगी कि हम उसे दोनों ओर से संतुष्ट रखें।

मेरे एक मित्र हैं। कविताएं वगैरह लिखते रहते हैं। बधाई देने आये तो लीक से हटकर बात करने लगे, 'अरे भाई यह तो बताओ अब क्या कार्यक्रम है?'

मैंने कहा, 'अरे छोडो यार, अभी जीत की खुमारी टूटी नही कि तुमने काम की बातें शुरू कर दी। नये साल का दिन है बोलो क्या पिओगे?'

'पीना तो चलता रहेगा, परंतु तुम्हें अपनी नीतियां तो स्पष्ट करनी ही होंगी।' मित्र को सनक सवार थी।

मैं बोला, 'देखिये, पहली नीति तो फिलहाल मन मे यह चल रही है और तुम तो अपने ही हो, तुमसे क्या छिपाना, वह यह कि चुनाव मे दस *लाख रुपया खर्च हो गया है, उसकी प्रतिपूर्ति की दिशा मे कुछ कारगर कदम* उठाने होंगे।'

'यह हुई न बात। मैं भी यही सोच रहा था कि इतना पैसा खर्च करके केवल जनसेवा की तो फिर इस महोत्सव का अर्थ क्या है? जनसेवा तो हो चुकी चुनाव से पहले तक, अब तो सेवा का मेवा वसूलना है। एक बात और बताओ कि यह जो 'गरीबी उन्मूलन' की बात फिर से तुम्हारे मैनीफेस्टो में कही गयी है, उसका मतलब क्या है?' मित्र ने पूछा।

मैंने कहा, 'उसका मतलब गरीबी मिटाने से ही है। अगर मैंने अपने दस लाख उगाहकर आगे की तीन पीढियों के भरण-पोषण की ठोस व्यवस्था कर दी तो कम-से-कम मेरा परिवार तो तीन पीढ़ी तक देश के सामने गरीबी की समस्या के रूप मे प्रस्तुत नही होगा? सगे-संबंधियो तथा कुटुंबीजनों की

फिल्म देखने गये किशनजी

किशनजी को अकस्मात फिल्मी हीरो बनने का दौरा पड़ा। वे जब सिनेमा देखने गये तब तक तो ठीक थे लेकिन लौटने पर उनका कायाकल्प हो गया था और वे एक नई बीमारी साथ ले आये थे। उनकी घरवाली चिन्तातुर हो गयी कि उनके भले-चगे पति को यकायक यह क्या हो गया है। वे पागलों की-सी हरकतें क्यों करने लगे है। उस दिन किशनजी द्वारा किये गये कौतुक की एक झलकी यहां प्रस्तुत है।

किशनजी ज्योंही सिनेमा से लौटकर घर मे घुसे तो पत्नी को बाहों मे भरकर उसे फिल्मी अंदाज से देखने लगे और कुछ पल बाद तो उनकी आंखों से झर-झर आँसू झरने लगे और भर्राती हुई आवाज मे कहने लगे, 'रामली, मैं तुमसे प्यार करता हूं। प्यार मे मेरे साथ धोखा तो नही होगा ?'

बेचारी रामली उन पर चढे भूत को समझ नही पा रही थी, वह बोली, 'प्यार मे धोखा क्यो होगा मैं तो आपकी ब्याहता पत्नी हू।' किशनजी ने उसके इस कथन पर तनिक भी ध्यान नहीं दिया और वे फुसफुसाये—'सच, रामली मैंने जिन्दगी में केवल तुमसे ही प्यार किया है। कही ऐसा न हो तुम मुझे अकेला छोड़कर चली जाओ।'

'कैसी बहकी-बहकी बात कर रहे हैं आप। आखिर मै अपने इन तीन बच्चो को लेकर जाऊंगी कहां ?' रामली ने अपनी विवशता प्रकट की। पर किशनजी तो अभी भी उसकी इन बातो से बेखबर थे और वे तो अकस्मात रोते हुए गाने लगे :

खिलौना जानकर तुम तो
मेरा दिल तोड़ जाते हो।

ठेके परमिट आदि की व्यवस्था द्वारा अगर मैंने गरीबी दूर करने की कोशिश की तो वह भी जनसेवा व गरीबी हटाओ की दिशा में ही कारगर कदम है न ?'

मित्र ने शराब का प्याला खाली किया और कहा, 'लेकिन यार एक बात समझ में नहीं आ रही। यह जो नये स्वच्छ प्रशासन की बात आप लोगों ने फैलायी है उसका क्या तात्पर्य है ?'

'उसका तात्पर्य साफ है। हम में काफी लोग नये और साफ-सुथरे हैं। अच्छे कपड़े पहनते हैं—इसलिए ऐसी स्थिति में हम जो प्रशासन देंगे वह स्वच्छ तो होगा।'

'वाह क्या कहने दोस्त, घबराओ नहीं, हमारी कलम तुम्हारे साथ है।'

मैं बोला, 'फिर कोई दिक्कत नहीं है। एक अर्से से आप लोगों का हमें जो यह सहयोग मिल रहा है, उसी वजह से तो हम लोग जमे हुए हैं। इस बार मैं चेष्टा करूंगा कि किसी पुरस्कार का या अन्य किसी फैलोशिप का बन्दोबस्त कर दूं। अपने अन्य मित्रों का भी नाम बताओ जो लोग हमें सहयोग कर रहे हैं, उनके लिए हमें भी सहर्ष काम करना चाहिए। इससे साहित्य और राजनीति के संबंधों की सार्थकता तथा उसके पुश्तैनी संबंधों की पुष्टि हो पायेगी। साहित्य और राजनीति को एक-दूसरे से अलग नहीं किया जा सकता। केवल एक-दूसरे के विरोधियों को ही इस मार्ग से अलग किया जा सकता है। साहित्य व राजनीति तो एक-दूसरे के पूरक हैं। हमारा-तुम्हारा संबंध उसी का एक प्रमाण है।'

साहित्यकार दोस्त हंसता हुआ चला गया। नये साल में जीतने की, साहित्य व राजनीति के सामंजस्य तथा दस लाख रुपये वसूलने तथा विरोधियों को निरंतर कमजोर करने की नीतियों के कारण घर में पूरी खुशहाली है और सच कहूं, बीवी-बच्चे चहक रहे हैं। भगवान मेरी जैसी नयी-नयी खुशियां नये साल पर विरोधियों को न दे—बस यही प्रार्थना है।

फिल्म देखने गये किशनजी

किशनजी को अकस्मात फिल्मी हीरो बनने का दौरा पड़ा। वे जब सिनेमा देखने गये तब तक तो ठीक थे लेकिन लौटने पर उनका कायाकल्प हो गया था और वे एक नई बीमारी साथ ले आये थे। उनकी घरवाली चिन्तातुर हो गयी कि उनके भले-चंगे पति को यकायक यह क्या हो गया है। वे पागलों की-सी हरकतें क्यों करने लगे है। उस दिन किशनजी द्वारा किये गये कौतुक की एक झलकी यहां प्रस्तुत है।

किशनजी ज्योंही सिनेमा से लौटकर घर मे घुसे तो पत्नी को बाहों में भरकर उसे फिल्मी अंदाज से देखने लगे और कुछ पल बाद तो उनकी आंखों से झर-झर आंसू झरने लगे और भर्राती हुई आवाज मे कहने लगे, 'रामली, मैं तुमसे प्यार करता हू। प्यार मे मेरे साथ धोखा तो नही होगा?'

बेचारी रामली उन पर चढ़े भूत को समझ नही पा रही थी, वह बोली, 'प्यार मे धोखा क्यों होगा मैं तो आपकी ब्याहता पत्नी हू।' किशनजी ने उसके इस कथन पर तनिक भी ध्यान नही दिया और वे फुसफुसाये—'सच, रामली मैंने जिन्दगी में केवल तुमसे ही प्यार किया है। कही ऐसा न हो तुम मुझे अकेला छोडकर चली जाओ।'

'कैसी बहकी-बहकी बात कर रहे है आप। आखिर मैं अपने इन तीन बच्चों को लेकर जाऊंगी कहां?' रामली ने अपनी विवशता प्रकट की। पर किशनजी तो अभी भी उसकी इन बातों से बेखबर थे और वे तो अकस्मात रोते हुए गाने लगे :

खिलौना जानकर तुम तो
मेरा दिल तोड़ जाते हो।

मुझे इस हाल मे किसके
सहारे छोड़ जाते हो।

रामली को शका हुई कि उसके पति को एकाएक यह शौक क्या चर्राया है? उन्हे आखिर हो क्या गया है? उसने किशनजी की दोनों बाहे पकड़कर—उन्हे हिलाकर कहा, 'सुनिये, आप यह क्या कर रहे हैं? अपने तीनो बच्चे आपको इस हालत मे देखकर हंस रहे है।' पर किशनजी का रिकार्ड बज रहा था। अनवरत वे अपने फटे बांस जैसे गले से रेंके जा रहे थे। रामली ने उनसे अपने आपको बधन मुक्त किया और बाहर की ओर भागी। उसे भागते देख किशनजी ने अपना रिकार्ड तत्काल बदला :

रुक जा ओ जाने वाली रुक जा
मैं तो राही तेरी मंजिल का।
नजरो मे तेरी मैं बुरा सही
आदमी बुरा नही मैं दिल का।

रामली जब लौटी तो उसके साथ मकान के एक अन्य किरायेदार सज्जन थे। रामली उन्हें इसलिए ले आई थी ताकि उसके पति मे हुए इस परिवर्तन की हकीकत को जाना जा सके। अपनी पत्नी के साथ दूसरे मर्द को देखकर तो किशनजी का नक्शा ही बदल गया। उन्होने अपना रिकार्ड रोक दिया और गुस्से से कापने लगे। खलनायक की तरह उनकी आंखें लाल हो गयीं और वे किरायेदार महाशय को घूरने लगे। किशनजी के इस तरह देखने से किरायेदार की घिग्घी बंध गयी, वे एकदम दो कदम पीछे खिसककर खड़े हो गये। रामली भी एक ओर खड़ी उन्हें देख रही थी। किरायेदार महाशय घबराते हुए कामेडियन के अदाज मे बोले, 'किशनजी, आप··· किशनजी···हैं···न।'

'तुम···तुम यहा आये कैसे?' किशनजी उसी तरह दहाड़े जिस तरह खलनायक, नायक पर दहाड़ता है।

'मैं···मैं···तो इनके साथ आया हूं।' उसने रामली की ओर इशारा करके कहा। इतना सुनना था कि किशनजी ने खलनायक के अदाज में किरायेदार की पीठ पर धौल जमाया और फिर तो शुरू कर दी—ढिशूं-ढिशूं-ढिशूं। किरायेदार महोदय इस अप्रत्याशित हमले के लिए तैयार नहीं

थे। रामली ने बीच-बचाव के लिए हस्तक्षेप किया तो—इससे किशनजी के घाव पर नमक लगा और उन्होंने रामली को गंदी-गंदी गालियां देते हुए पाच-सात मुक्के जमाकर संज्ञाहीन कर दिया।

किशनजी ज्योंही रामली से निबटकर किरायेदार की ओर मुखातिब हुए, वे नदारद थे। वे मैदान छोडकर भाग चुके थे—उनके स्थान पर एक सुन्दर स्त्री मुस्कुराती हुई उन्हें निहार रही थी। यह सब एक फिल्म की तरह अकस्मात हुआ। स्त्री को देखते ही किशनजी के अंगारे बुझ गये और उनकी आंखें खुली की खुली रह गयी। किशनजी ने अब कामेडियन अदाज मे मुह खोला, 'आप'''आप'''कौन है ?'

'मैं अभी बताती हू कि मैं कौन हूं।' इतना कहकर वह स्त्री अपनी साडी को कमर में अच्छी तरह लपेट और खोंसकर बोली, 'अब आइये किशनजी।' यह कहकर किशनजी के गाल पर थप्पड से वार किया—फिर क्या था स्त्री ने तावड़तोड किशनजी की मरम्मत शुरू कर दी। किशनजी जोरों से चिल्लाये, 'रामली मुझे बचाओ—यह स्त्री मुझे मार रही है।' पर रामली तो संज्ञाहीन हुई एक ओर पडी कराह रही थी। जब किशनजी संज्ञाहीन हो गये तो स्त्री ने अपनी सांसो पर काबू पाते हुए कहा, 'कहो कैसी रही किशनजी ?' किशनजी फर्श पर बिछे हुए थे। किशनजी के तीनों अबोध बालक यह सब सहमे-सहमे खड़े हुए कमरे के एक कोने से देख रहे थे।

किशनजी ने पडे-पडे ही रामली से पूछा, 'क्यो रामली यह कौन थी ?'

'अभी जो महाशय आपको समझाने आये थे उनकी धर्मपत्नी है।'

'मुझे माफ कर दो रामली, मुझसे भूल हो गयी।' किशनजी फिर फिल्मी अदाज मे फुसफुसाये और गाने की मुद्रा में आये कि रामली लपककर किशनजी के पास आयी और अपने दोनो हाथों से उनके मुंह को भीच दिया और बोली, 'रहने दो मेरे हीरो, अब आगे फिल्म न देखना, वर्ना मेटल हास्पिटल भी तुमको ही जाना पड़ेगा।'

किशनजी ने चोर नजरों से कमरे के दरवाजे की ओर देखा—किरायेदार और उनकी पत्नी उन्हें देख-देखकर हस रहे थे। किशनजी ने अपनी दोनों आखें बद कर ली और कराहने लगे।

उल्लू लाये फूटी कौड़ी

दीवाली के ठीक तीन दिन पूर्व लक्ष्मीवाहन उल्लू से मुलाकात हो गयी। छूटते ही मैंने कहा, 'कहो भाई क्या हाल है ?'

'ठीक है, दिन गुजार रहे हैं।' उसकी आवाज मे पीड़ा की खनक थी, लगा शोषण का शिकार अथवा बधुआ मजदूर है अतः मैंने कुरेदा, 'क्यों भाई, लक्ष्मीजी के पास रहते हुए भी इतनी निराशा ?'

'छोड़िये शर्माजी, आप भी क्या बात ले बैठे। आप तो बताइये लक्ष्मी पूजन की तैयारी पूर्ण है या नही ?'

'उडाओ मत उल्लू भाई। मुझे बताओ तो सही, आखिर बात क्या है ?'

'बात कुछ नही शर्मा, 'मैं ठहरा उल्लू। समझो इसीलिए आज तक चक्कर मे फसा हुआ हू। लक्ष्मीजी को मेरी यही खासियत पसन्द आई हुई है, वे कोई भी उल्लू दीखा—डेरा डाल देती हैं।'

'यहा मैं तुम्हारी बात से सौ फीसदी सहमत हू। बुद्धिमान आदमी परेशान है और खासकर मेरे जैसा लेखक—जो इतनी मिन्नत करने के बाद भी लक्ष्मीजी को अपने यहां लाने को तैयार नही कर सका।' मैंने कहा।

उल्लू बोला, 'लक्ष्मीजी बड़ी चतुर हैं शर्माजी, वह आपकी बातों मे नही आने वाली। मेरा जैसा भोंदू चाहिए उन्हें। आज बडी मुश्किल मे फंसी हुआ हूं। कहने लगी—कहां जा रहे हो उल्लू, मुझे आज सेठ भोंदूलाल के यहां जाना था। वह मेरी बहुत कद्र करता है। मैंने कहा—कभी ज्ञानप्रसाद के यहा भी चलो—तो आग-बबूला हो गयी। कहने लगी—नाम मत लो उस घमण्डी का। सरस्वती की पूजा करके लक्ष्मी की कामना करता है।'

'लेकिन उल्लूजी आप नाश्ता कर लें, कुछ भी खा-पी लें परन्तु मुझे इस

बार वेवकूफ बताकर उन्हें मेरे यहां साल दो साल के लिए ले आइये न, सच मैं महंगाई से त्रस्त हूं। गरीबी मेरा पीछा ही नही छोड़ती।' मैंने कहा।

उल्लू बोला, 'शर्मा मैं या तुम उन्हे बना नही सकते। वे तुम्हे भी अच्छी तरह जानती होगी। कहेंगी—वह लेखक, छोड़ो उसे, भूखो मरने दो—सब भूल जायेगा कविताएं लिखना।'

'लेकिन मेरे ऊपर कृपा कर एक बार कोशिश तो करिये—मैं निरा वेवकूफ बनने को तैयार हूं। बशर्ते कि लक्ष्मीजी पधारे। सच मैं अपनी बुद्धि मे परेशान हो गया हू। मैं बुद्धि का परित्याग करने को सहर्ष तत्पर हू। आप उन्हें घुमाओ तो सही।'

'भाई तुम पुश्तैनी वेवकूफ नही हो। इसलिए उनकी कद्र नही जानते। पैसा आया नही कि अनाप-शनाप खर्च करने लगोगे। बुद्धि से काम लेने लगोगे, सुख-सुविधाओं में विस्तार की ओर ध्यान दोगे। तब यह कोई लक्ष्मी जी की कद्र थोड़े ही हुई, लक्ष्मी की कद्र लक्ष्मी को खर्च न करने से है। सेठ भोंदूलाल को देखो। कितना ही पैसा आ जाये—रोटी चटनी से ही खायेगा तथा लक्ष्मी को सात तालों मे कैद करके अभावों मे ही जीता रहेगा। मोटे रेजे की धोती-कुरता पहने रहेगा। रहेगा भोंदू-का-भोंदू।' उल्लू बोला।

'फिर लक्ष्मी को प्राप्त करने का अर्थ क्या है। फिर लक्ष्मी तो चंचला है—उसे स्थिर करने से क्या लाभ? खर्च तो करना ही होगा।'

'इसीलिए तो दुख पा रहे हो भाई मेरे, लक्ष्मी आई नही कि खर्च करने की सोचने लगे हो। पता भी है मैं चलने लगा तो हाथ खर्च के लिए मुझे क्या दिया है—उन्होंने?' उल्लू बोला।

'एक फूटी कौड़ी। बोली हो सके तो इसे चला आओ। यह कभी चलती ही नही। मैंने कहा भी जब यह चलती ही नही तो आप मुझे क्यों दे रही हो! बोली कि फिजूलखर्जी ठीक नही है। मृत्युलोक का व्यक्ति इसीलिए तो तकलीफ पा रहा है। आवश्यकताओं को भूलकर सुख-सुविधायें बटोरने पर लगा है। मैंने कहा भी साठ पैसे तो खुल्ले दे दो ताकि कही इच्छा हो तो एक कप चाय तो पी सकूं। बोली कि रेजगारी कहां है उल्लू। और चाय पीने से पेट खराब हो जाता है। अब बताओ मैं उल्लू उन्हें क्या जवाब देता। टरका दिया। थक गया हूं। पर फूटी कौड़ी से चाय भी नही पी सकता।'

उल्लू यह कहते हुए रुआंसा हो गया।

मैंने कहा, 'चाय तो मेरे साथ पिओ आओ घर चलते हैं।' यह कहकर मैं उन्हें घर ले आया। पत्नी से कहा कि दो कप चाय बनाओ, उल्लूजी आये हैं तो बिफर पड़ी—'हे भगवान वीरान करने को एक ही उल्लू पर्याप्त होता है। अब तो हर डाल पर उल्लू आ बैठा है। आपके होते हुए दूसरे की क्या जरूरत रह गयी थी ?'

मैं बोला, 'नहीं असली उल्लू आये हैं। लक्ष्मी वाहन उल्लूजी।'

'कोई भी आये पहले चीनी और चाय की पत्ती ले आओ। बाद में चाय बनाने का आदेश देना।' पत्नी कुपित होकर बोली।

मैंने कहा, 'भागवान, इस समय तो किसी से उधार ले आओ। अपने घर आखिर उल्लूजी आये हैं।'

'लेखक महोदय—पहले जो चीजें उधार ली हैं, उनका चुकारा तो कर दो। मुहल्ले का कोई घर नहीं है—जिसे कुछ-न-कुछ देना बाकी न हो। घर में फूटी कौड़ी भी नहीं है।'

मेरी पत्नी की इस बात पर उल्लूजी ने झट से अपने कुरते की जेब में फूटी कौड़ी निकाली और कहा, 'लो फूटी कौड़ी तो मेरे पास है।'

पत्नी उल्लूजी पर बरस पड़ी, 'शर्म नहीं आती तुम्हें, फूटी कौड़ी दिखाते हुए! लक्ष्मीपुत्र वाहन होते हुए भी फूटी कौड़ी दिखाते हो। दे देना यह फूटी कौड़ी अपनी अम्मा को। बाजार में भी चाय पीते तो साठ पैसे खुल्ले देने पड़ते।'

उल्लूजी ठग पी गये। मेरी ओर कातर नजरों से देखकर दरवाजे की ओर बढ़े। मैं चुपचाप देखता रहा। धीरे-से बोला, 'परसों दीवाली पूजन है—क्या उन्हें लेकर आ रहे हो ?'

उल्लू ने आंखें निकाली और फिर सिकोड़ी और बोला, 'देखिये मैं आपकी कोई मदद नहीं कर सकता। जो आदमी मेरा सम्मान नहीं कर सका वह मां लक्ष्मी का क्या करेगा ? एक कप चाय नहीं पिला सके तुम।' उल्लूजी चले गये। मैं दीवाली पूजन के लिए उधार के जुगाड़ में इधर-उधर मुंह मारने घर से निकल पड़ा। मन में यह विश्वास लिए कि मैं उल्लू से कहां बुरा हूं, उसमें ठीक तो मैं ही हूं।

बावरे लड़ा नयन के पेंच

मेरे परमप्रिय दोस्त आकाश को निहार—देख कितनी रंग-बिरंगी पतंगें वहां शोभायमान हैं। कनकौवा उड़ाने के ये वे दिन है जब आदमी उसके साथ स्वयं भी उड़ने लगता है। बस ऊपर छत पर चलकर देख कैसे-कैसे पेंच लड़ रहे हैं। लोग आसपास ही नहीं दूर-दूर तक खंजन नयनों की तलाश मे भटक रहे हैं। यही वह ऋतु है जब आदमी भयानक शीतल बयार तथा ठण्ड-जुकाम के बावजूद छत पर दौड़कर जाता है तथा नैन लडाने के लिए नैन तलाशता है। अच्छी तरह देख शहर की तमाम छतों पर मेला लग रहा है। ऐसा नहीं है कि तमाम लोग कनकौवा से पेंच लड़ाने ही आये हों—इन दिनों नैन लड़ाने की ऋतु पृथक से और आई हुई है। सही भी है नैन इस सर्दी में नहीं तो क्या जून की तपती दोपहर में जाकर थोडे ही लडायेगा ! उठ, तू भी छत पर चल तथा पास-पड़ोस में दृष्टिपात कर—कोई न कोई अंखिया तुझे देखने को तरस रही होगी।

चल छत पर चल। कोर्स की कोई पुस्तक ही ले चल। तेरे घरवाले समझेंगे कि तू धूप में जाकर परीक्षा की तैयारी कर रहा है—लेकिन तू जिस विकट परीक्षा मे बैठ रहा है—उसे भला वे क्या जाने ? धूप के बहाने रूप की आंच मे नैन सेंक और फिर चलने दे पतंगबाजी की तरह पेंच के दाव-पेंच—चाहे ऊपर का हो या नीचे का—आनंद तब तक आता है, जब तक कि कनकौवा आकाश मे उलझा रहता है। पतंग कटी कि सारा मजा किरकिरा हुआ। लेकिन तेरी पतंग की डोर इतनी मजबूत है कि यह तब तक नहीं कटने वाली है, जब तक कि तेरी पतंग नायिका का बाप इस सारे प्रकरण मे आकर हस्तक्षेप नहीं कर दे अथवा तेरी स्वयं की मा तेरी पतंग-

बाजी का रहस्य नही जान ले। तू तो पेंच लड़ाये जा और ढीलो पतगबाजी के माध्यम से सामने वाले को उलझाये रख ! शरद ऋतु के यही दिन है—जब रूप और धूप तुझे रास आते है। स्कूल-कालेज का मोह छोड़ घर पर स्टडी करने का नाटक कर अपनी छत पर जा बैठ।

इसके अलावा मेरे मित्र के बावरे मन, तू यह भी कर सकता है कि सामने खडी सूनी अखियों से आंखो ही आखो मे कुछ कह या फिर पतग लूटने अथवा उसकी छत पर उलझी पतंग सुलझाने के बहाने पहुँचकर उससे कह कि मेरी उलझी पतग कब तक सुलझ जायेगी। निश्चित है कि वह तुझसे कुछ नही कहेगी तथा अप्रैल माह में तेरा परीक्षा-परिणाम घोषित होगा तब तुझे अपने आप पता चल जायेगा कि तेरी पतग कितनी गहराई तक उलझ गयी है—जिसके कारण तेरे पिताजी लाल-लाल आखें किये बेंत लिए तेरे स्वागत को खड़े तैयार मिलेगे। उस दिन सभव है—तेरी जनवरी से उलझी पतग कट जाये और तू स्वय जार-जार रोने लगे। लेकिन कुछ भी हो बावरे, पतग और दो आंखें ईश्वर ने लडाने के लिए ही हमें दी है। कभी पतग और कभी नयन, जैसा भी तेरा मन करे, लड़ा।
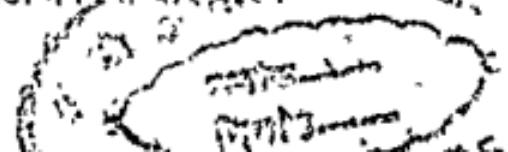
यही क्या, तू चाहे तो पतग के बहाने अपने हार्दिक भावो की अभिव्यक्ति भी बखूबी कर सकता है। जैसे 'मारा गया क्यों काटा' इन दोनों का अर्थ सामने वाली ऑखे भली भांति जानती है कि अगला उसके वियोग में तड़प रहा है कि तुमने अपने नैनों से ऐसा कटाक्ष किया है—जिससे अगला मारा गया है। पतग नीली हो अथवा पीली, पर तेरी आखें गीली है—जिनमे प्रेम के अश्रु हैं अथवा प्रेमिका के पिता का आतक है। हो न हो मित्र तू इस बार किसी न किसी रूप में फना होकर रहेगा। वह देख आकाश में उड़ती पतंग किस तरह कटकर पतनोन्मुख हो रही है। इससे निराश मत हो—हर कटने वाली पतग का अत सदैव यही होता है। चाहे कितना ही चातार पतगबाज हो—उसकी हार कही न कही सुनिश्चित है। चाहे तू दिल पर आरा चलवा अथवा कटार, मानकर चल, यदि समय रहते तूने अपने आपको साधा नहीं तो तेरा होलिकादहन हो जायेगा।

मौन से डर कैसा। प्यार किया तो डरना क्या जैसा भाव जनमाकर अपने को मजबूत रख। मित्र जीत तेरी अवश्य होगी। पतग या नाव तेरी

नही सामने-वाले की कटेगी। तुम्हें तो अपनी गंदी आदतों से बाज नही आना है। चाहे पत्थर डोर से बांधकर लगर ही क्यों न फेंकना पड़े—हर हालत में पतग को उलझाना है। लगर फेंकने मे दूर दृष्टि, पक्का इरादा तथा कड़ी मेहनत का सबको पता चलेगा और वे सब एक दिन तेरा अभिनदन समारोह समिति के जरिये सामूहिक सम्मान करेंगे।

इसलिए मेरे एकमात्र बेवकूफ दोस्त, छत पर चढकर प्रेम का भूत चढा ले। सच मान, सफलताएं तेरे चरण चूमेंगी—बस दो-तीन बार तुझे अपनी सफलता के चरण चूमने हैं। रात को सर्दी बढ गयी है तो क्या हुआ—जब तुझे खांसी या ठण्ड जुकाम हो जायेगा तथा जब तू खुल-खुल खांसेगा और बलगम का ढेर लगायेगा तो तेरी नायिका का हृदय पिघल जायेगा तथा तुझे वह काली मिर्च की चाय पर अपने घर पर आमन्त्रित करेगी। तब तू सावधानी बरतना और कहना कि प्रिय, तुम काली मिर्च की बजाय मेरे इन नैनों में लाल मिर्च डाल देती तो ठीक रहता—जिससे ये नैन कम-से-कम तुम्हारे नैनों से तो नही लडते। तब हो सकता है कि नायिका तुमसे यह कहे कि बावरे हो सके तो तुम अपने मकान की तिमजली छत से कोई प्रेमपत्र लिखकर कूद पड़ो। लोग कहेंगे कि पतग उड़ाता-उडाता गिर गया और कम-से-कम मुझे तो मुक्ति मिले।

शरम आने तथा डूब मरने की बात है मेरे सुदामा। बढ़ी हुई दाढी भी छत पर बना तथा पकोड़ी और गुलगुले उछाल-उछालकर खाने के प्रति अपनी अरुचि को प्रकट कर। खैर फिलहाल शरद ऋतु और कनकौवा के दिन हैं—तू भी उड़ और पेच लडा तथा लड़ते-लड़ते फना हो जाना। प्रेम मे जीने के बजाय फना हो जाना आजकल ठीक रहता है। कही ऐसा अवसर मत आने देना जिससे तुम्हारी प्रेमिका तुम्हारे सिर मढी जाये, यदि ऐसा हो गया तो फिर तुम्हारी पतग कटी समझना। इसलिए छत पर चढकर खेल परन्तु आसानी मे और पेच लडा नैनन से बार-बार [illegible]

मैं बोला, 'पहले मुझे आप यह बताइये कि यह आजादी क्या है ?'

'आजादी यही है कि अपनी मस्ती में मौज मारो। कोई बीच मे टांग अड़ाये तो हाथ के डंडे से टांग तोड़ दो।' भोंदूलाल बोले।

'आजादी का टांग तोड़ने से तुमने यह नया रिश्ता कायम किया है। फिर तो तुम झंडारोहण का अर्थ भी अलग ही रखते होगे ?' मैंने पूछा।

'झंडारोहण का मतलब—डंडा ऊंचा करने से है। झंडा ऊंचा करने से देश ऊंचा होता है जबकि डंडा ऊंचा करने से व्यक्ति विशेष का नाम व धाक बनती है। इसलिए काम वही करना चाहिए जिससे नाक ऊंची होती हो। झंडा ऊंचा करने की अब जरूरत रही ही नहीं। पंजाब में नही देखा—लोग डंडा ऊंचा करने में लगे थे। गुजरात-आसाम भी इस मामले मे कही पीछे नही है' भोंदूलाल बोले।

'क्या दर्शन बताया है भोंदूलालजी आपने भी। झंडारोहण का मतलब डंडा ऊंचा करें। इसका मतलब तो यह हुआ कि वतन की आबरू खतरे में है,' मैंने कहा।

'वतन की आबरू खतरे में नही है, शर्मा। आबरू तो आपकी खतरे मे लगती है। आप आजादी का मतलब नहीं जानते और न ही झंडारोहण का। उल्टे बेतुकी बातों से आजादी का मजा किरकिरा करने मे लगे हो। तुम्हारे जैसे नागरिकों के कारण ही तो इस देश का भट्ठा बैठ गया है। समझने की कोशिश क्यों नही करते। राजनेता क्या कर रहा है ?'

'राजनेता क्या कर रहा है, मुझे क्या पता।'

'मुझे पता है। वही स्कूलों-कालेजों तथा सार्वजनिक स्थानों पर झंडारोहण बनाम डंडारोहण करने मे लगा है। वोट के लिए साम-दाम-दंड-भेद की राजनीति अपनाकर अपनी कुर्सी को पुख्ता करने मे लगा है। उसकी आजादी को तुम क्या जानो। यह जीव ही केवल ऐसा है जो जबरदस्ती अपनी धाक जमाए हुए है।' भोंदूलाल बोले।

'मैं समझ गया भोंदूलालजी। यही न कि यह जीवन गरीबों का खून पी रहा है', मैंने कहा तो भोंदूलाल चिल्लाया, 'बकवास मत करो शर्मा। व्यर्थ बातों को मत जोड़ो। किसी चीज को नही समझो तो हार मान लो।

'डंडा' ऊंचा रहे हमारा

'जिसकी लाठी उसकी भैंस' वाली कहावत चरितार्थ हो रही है। झंडे को भूलकर लोग अपना-अपना डंडा ऊंचा करने में लगे है। झडे का मामला मटियामेट हो गया है। सीधे-सज्जन आदमी का कोई महत्व नही है। उसके साथ कोई कभी भी चोट कर सकता है। सज्जनता उसकी नियति होने से वह सब कुछ बर्दाश्त कर लेता है। झडे को ऊंचा करने के लिहाज से आजादी की यह सालगिरह बहुत महत्वपूर्ण हो गयी है। इस बार जितनी जोर जबरदस्ती हुई है—उतनी पहले कभी नही। पजाब की समस्या का हल जबरदस्ती पूर्वक करने के बाद आसाम के साथ बलात्कार जारी है। उस पर तुर्रा यह कि चुनाव के समय एकता-अखडता के लिए जो वादा किया था—वह पूरा कर दिखाया गया है। कोई चाहे अठारहवी सदी से निकला हो या नही कि इक्कीसवी सदी मे चलने की जबरदस्ती का शिकार है। आप घर मे आराम फरमायें, सारा काम कम्प्यूटर दादा निपटा देंगे। आपको कम्प्यूटर की जरूरत है या नही, इसकी चिन्ता किसे है—बस जबरदस्ती डडे के बल पर कम्प्यूटर से नाता जोडिये। भूख-गरीबी-बेकारी की बातें हमें फिसड्डी बनाती हैं। आधुनिक तकनीक, बड़े कल-कारखानो तथा अणु परमाणु की बात करनी है।

मैं इन सारी बातो से बड़ा बोर अनभिज्ञ-सा प्राणी रहा हू। एक सवेरे मित्र भोंदूलालजी ने आ हमला किया और छूटते ही बोले, 'अरे भाई क्या मुह लटकाए बैठे हो। आजादी की सुबह भी तुम 1942 की मुद्रा अपनाए हुए हो। घबराओ मत भाई, आज तो आजादी का मजा लेने के दिन हैं ये। हम लो—आओ कही डंडा ऊंचा करें।'

मैं बोला, 'पहले मुझे आप यह बताइये कि यह आजादी क्या है ?'

'आजादी यही है कि अपनी मस्ती मे मौज मारो। कोई बीच मे टांग अड़ाये तो हाथ के डंडे से टाग तोड़ दो।' भोंदूलाल बोले।

'आजादी का टांग तोड़ने से तुमने यह नया रिश्ता कायम किया है। फिर तो तुम झंडारोहण का अर्थ भी अलग ही रखते होगे ?' मैंने पूछा।

'झंडारोहण का मतलब—डंडा ऊंचा करने से है। झंडा ऊंचा करने से देश ऊंचा होता है जबकि डंडा ऊंचा करने से व्यक्ति विशेष का नाम व धाक बनती है। इसलिए काम वही करना चाहिए जिसमे नाक ऊंची होती हो। झंडा ऊंचा करने की अब जरूरत रही ही नहीं। पंजाब मे नही देखा—लोग डंडा ऊंचा करने मे लगे थे। गुजरात-आसाम भी इस मामले में कही पीछे नही है' भोंदूलाल बोले।

'क्या दर्शन बताया है भोंदूलालजी आपने भी। झंडारोहण का मतलब डंडा ऊंचा करें। इसका मतलब तो यह हुआ कि वतन की आबरू खतरे मे है,' मैंने कहा।

'वतन की आबरू खतरे में नहीं है, शर्मा। आबरू तो आपकी खतरे मे लगती है। आप आजादी का मतलब नहीं जानते और न ही झंडारोहण का। उल्टे बेतुकी बातों से आजादी का मजा किरकिरा करने में लगे हो। तुम्हारे जैसे नागरिकों के कारण ही तो इस देश का भट्ठा बैठ गया है। समझने की कोशिश क्यो नही करते। राजनेता क्या कर रहा है ?'

'राजनेता क्या कर रहा है, मुझे क्या पता।'

'मुझे पता है। वही स्कूलों-कालेजों तथा सार्वजनिक स्थानों पर झंडारोहण बनाम डंडारोहण करने में लगा है। वोट के लिए साम-दाम-दंड-भेद की राजनीति अपनाकर अपनी कुर्सी को पुख्ता करने मे लगा है। उसकी आजादी को तुम क्या जानो। यह जीव ही केवल ऐसा है जो जबरदस्ती अपनी धाक जमाए हुए है।' भोंदूलाल बोले।

'मैं समझ गया भोंदूलालजी। यही न कि यह जीवन गरीबो का खून पी रहा है', मैंने कहा तो भोंदूलाल चिल्लाया, 'बकवास मत करो शर्मा। व्यर्थ बातो को मत जोड़ो। किसी चीज को नही समझो तो हार मान लो।

नेता इस देश का सर्वथा अनोखा प्राणी है—जो झंडारोहण करने के लिए विख्यात है। मगर असल मे वह करता ऊंचा डंडा ही है।'

'वाह भोंदूलालजी, आपने तो कमाल कर दिया। आप नेता बन ही क्यों न जाते?'

'बेवकूफ शर्मा, नेता बना नही जाता—जन्म से पैदा होता है। जो बनता है वह चलता नही। इसलिए स्वतंत्रता दिवस की इस पावन वेला मे उचित तो यह रहे कि तुम मेरे साथ थोडी देर बाहर चलो।'

'बाहर चलने से ज्ञान चक्षु नही खुला करते भोंदूलालजी। आप बाहर घूमे तो क्या हुआ, रहे तो पूरे भोंदूलाल ही। इस देश मे गधे-घोडे का फर्क अभी भी समझने वाले नही हैं।' मैंने कहा तो भोंदूलाल ने दांत पीसकर कहा, हैं समझने वाले लेकिन एक बार बाहर तो चलो। सारे जहां मे अच्छा हिन्दोस्तां हमारा। जहां सब तरह की छूट है। तस्करी-रिश्वतखोरी-भ्रष्टाचार तथा अन्य तमाम गोरखधंधों में हमने नये कीतिमान स्थापित कर लिए है। और एक तुम हो कि घर में कूपमंडूक बने बैठे हो।'

'मुझे सब पता है भोंदूलालजी। बाहर आजादी के जश्न चल रहे हैं। लेकिन मैं वाकई आज भी आजाद नही हू। तुम्हें यह जानकर अत्यंत दुख व आश्चर्य होगा कि मैं चूल्हे पर दाल के लिए पानी चढा चुका हू। यदि मैंने इसमे तनिक भी स्वतंत्रता का परिचय दिया तो…'

बात पूरी भी नही हुई कि भोंदूलाल बीच में ही आजादी का अर्थ भूलकर अपनी चप्पल तलाशने लगा। बराबर वाले मकान मे सिंहल साहब ऊंची आवाज मे राष्ट्रगान गा रहे थे, 'डंडा ऊंचा रहे हमारा।'

खजूर में अटकी इक्कीसवीं सदी

यह हमारी दूरदृष्टि का ही परिचायक है कि जब लोग अठारहवीं शताब्दी के शिकंजे से नहीं निकल पाये हैं—उस समय हम बीसवीं शताब्दी में ही इक्कीसवीं शताब्दी की ओर छलांग लगाने वाले हैं। पूरे पन्द्रह वर्ष हैं अभी इक्कीसवीं शताब्दी के शुरू होने में, परन्तु हम पूर्वाभ्यास में जुट गये हैं। सही भी है जो समस्याएं पन्द्रह वर्ष बाद आयें उनसे हम पहले ही परिचित हो लें। चाहे महंगाई, बाजार भाव व कीमतों का मामला हो या फिर जीवन मूल्यों का, हमें पहले ही उनके बिगड़े स्वरूपों से वाकिफ होना ही चाहिए। इक्कीसवीं शताब्दी में महंगाई पराकाष्ठा पर होगी तथा समस्याएं विभीषिका का रूप ले चुकी होंगी—उस समय हम फिर आलाकमान को पीड़ित होकर दोषी करार नहीं दे सकते, क्योंकि श्रीमान तो पहले ही कह रहे हैं कि इक्कीसवीं सदी के मुंह में जाने को हमें तैयार रहना है। घबराने की बात कतई नहीं है—यह तो हमारी विकसित परम्पराओं की प्रतीक की बात है।

मेरे एक मित्र हैं—श्री फूलचंदजी। थोड़े अड़ियल किस्म के हैं। बाल की खाल निकालने में मशहूर हैं। एक दिन मैंने सरकार के इस नेक इरादे से परिचित कराते हुए उनसे कहा, 'तो फिर चल रहे हो फूलचंदजी।'

'कहां ?' अनजान बनकर वे बोले।

'इक्कीसवीं सदी में और कहां।'

'अच्छा···अच्छा···कितना किराया लगेगा ?'

'इक्कीसवीं शताब्दी में जाने का भी कोई किराया लगता है ? फूलचंद जी, इक्कीसवीं शताब्दी के यही तो मजे हैं कि इसमें मुफ्त में जाया जा

नेता इस देश का सर्वथा अनोखा प्राणी है—जो झंडारोहण करने के लिए विख्यात है। मगर असल में वह करता ऊंचा डंडा ही है।'

'वाह भोंदूलालजी, आपने तो कमाल कर दिया। आप नेता बन ही क्यों न जाते ?'

'बेवकूफ शर्मा, नेता बना नहीं जाता—जन्म से पैदा होता है। जो बनता है वह चलता नहीं। इसलिए स्वतंत्रता दिवस की इस पावन वेला में उचित तो यह रहे कि तुम मेरे साथ थोड़ी देर बाहर चलो।'

'बाहर चलने से ज्ञान चक्षु नहीं खुला करते भोंदूलालजी। आप बाहर घूमे तो क्या हुआ, रहे तो पूरे भोंदूलाल ही। इस देश में गधे-घोड़े का फर्क अभी भी समझने वाले नहीं हैं।' मैंने कहा तो भोंदूलाल ने दांत पीसकर कहा, हैं समझने वाले लेकिन एक बार बाहर तो चलो। सारे जहां से अच्छा हिन्दोस्तां हमारा। जहां सब तरह की छूट है। तस्करी-रिश्वत-खोरी-भ्रष्टाचार तथा अन्य तमाम गोरखधंधों में हमने नये कीर्तिमान स्थापित कर लिए हैं। और एक तुम हो कि घर में कूपमंडूक बने बैठे हो।'

'मुझे सब पता है भोंदूलालजी। बाहर आजादी के जश्न चल रहे हैं। लेकिन मैं वाकई आज भी आजाद नहीं हूं। तुम्हें यह जानकर अत्यंत दुःख व आश्चर्य होगा कि मैं चूल्हे पर दाल के लिए पानी चढ़ा चुका हूं। यदि मैंने इसमें तनिक भी स्वतंत्रता का परिचय दिया तो...'

बात पूरी भी नहीं हुई कि भोंदूलाल बीच में ही आजादी का अर्थ भूलकर अपनी चप्पल तलाशने लगा। बराबर वाले मकान में सिन्हा साहब ऊंची आवाज में राष्ट्रगान गा रहे थे, 'झंडा ऊंचा रहे हमारा।'

खजूर में अटकी इक्कीसवीं सदी

यह हमारी दूरदृष्टि का ही परिचायक है कि जब लोग अठारहवी शताब्दी के शिकंजे से नही निकल पाये हैं—उस समय हम बीसवी शताब्दी में ही इक्कीसवी शताब्दी की ओर छलांग लगाने वाले हैं। पूरे पद्रह वर्ष है अभी इक्कीसवी शताब्दी के शुरू होने मे, परंतु हम पूर्वाभ्यास में जुट गये है। सही भी है जो समस्याएं पद्रह वर्ष बाद आयें उनसे हम पहले ही परिचित हो लें। चाहे महगाई, बाजार भाव व कीमतों का मामला हो या फिर जीवन मूल्यों का, हमें पहले ही उनके बिगड़े स्वरूपो से वाकिफ होना ही चाहिए। इक्कीसवी शताब्दी मे महगाई पराकाष्ठा पर होगी तथा समस्याए विभी-षिका का रूप ले चुकी होगी—उस समय हम फिर आलाकमान को पीडित होकर दोषी करार नही दे सकते, क्योंकि श्रीमान तो पहले ही कह रहे हैं कि इक्कीसवी सदी के मुंह मे जाने को हमें तैयार रहना है। घबराने की बात कतई नही है—यह तो हमारी विकसित परपराओं की प्रतीक की बात है।

मेरे एक मित्र है—श्री फूलचंदजी। थोडे अड़ियल किस्म के हैं। बाल की खाल निकालने में मशहूर है। एक दिन मैंने सरकार के इस नेक इरादे से परिचित कराते हुए उनसे कहा, 'तो फिर चल रहे हो फूलचदजी।'

'कहां?' अनजान बनकर वे बोले।

'इक्कीसवी सदी में और कहां।'

'अच्छा...अच्छा...कितना किराया लगेगा?'

'इक्कीसवी शताब्दी मे जाने का भी कोई किराया लगता है? फूलचद जी, इक्कीसवी शताब्दी के यही तो मजे है कि इसमे मुफ्त में जाया जा

सकता है। इसमें रेलमन्त्री भी भाडा नही लगा अथवा बढ़ा सकते है। इस दृष्टि से इक्कीसवी शताब्दी फिलहाल कर मुक्त मनोरंजन है', मैंने कहा।

'इसका मतलब इक्कीसवी शताब्दी एक भावात्मक खोल है, जिसे ओढ लेना है और सदैव यही महसूस करते रहना है कि हम काफी समृद्ध और विकसित है', फूलचदजी ने व्याख्या की।

'जी'''जी'''आप बिल्कुल सही समझे है। इक्कीसवी शताब्दी मे ठीक पंद्रह साल पहले हम लोग जा रहे है—क्या आपको गर्व का अनुभव नही हो रहा ?'

'हां क्यों नही रहा, बीच के इन पद्रह सालों को आग लगा दू। बीसवीं शताब्दी के ये साल बड़े बुरे हैं। गरीबी-भुखमरी-अशिक्षा तथा बेकारी का हाल बेहाल है। इक्कीसवी शताब्दी की शुरुआत कितनी सुखद होगी—जब हम लोग हवा मे उडेंगे तो आदमी को आदमी नही समझेंगे', थोडा मुह बनाकर फूलचदजी बोले।

मैं थोड़ा चौंका और पूछ बैठा, 'आदमी को आदमी नही समझेंगे, क्या मतलब ?'

'मतलब स्पष्ट है। इक्कीसवी शताब्दी इतनी भयावह व जीवन मूल्यों से हटकर होगी कि ईमानियत को आत्मघात कर लेना पड़ेगा। चौपाया सस्कृति की छत्रछाया मे अपराध सिर उठा लेंगे तथा गरीबी नाम की बीमारी भूख से दम तोड देगी। इस तरह गरीबी स्वतः ही मिट जायेगी और इक्कीसवी शताब्दी नये मूल्यों की स्थापना के साथ हमसे साक्षात्कार करेगी।' फूलचंदजी ने यह कहते हुए नाक के नथुने फुलाए तो मैं बीच ही मे बोल पडा, 'नही, आप गलतफहमी के शिकार हैं। इक्कीसवी शताब्दी में कुछ नही होगा वैसा, जैसा आप सोच रहे है। सारे हालात यथावत रहने वाले है। केवल इक्कीसवी शताब्दी मे ले जाने वाला बदल सकता है, बाकी तो ज्यादा बदलाव नही आयेगा।'

'बदलाव आयेगा प्यारे भाई, गेहूं दस रुपए किलो तथा दूध बीस रुपए किलो होगा। इस महगे जटिलतम जीवन सघर्ष मे वही रह पायेगा—जिसमें हालात से जूझने की शक्ति होगी, इक्कीसवी सदी में रहने का अधिकारी भी वही होगा, जो साधन सपन्न होगा। गरीबो ने इस देश की

भयंकर तौहीन की है। उन्हें मिटाने का इससे बढ़िया और कोई कारगर उपाय है भी नहीं। बीसवी शताब्दी से लगे इन पंद्रह वर्षों मे इस तरह के निरापद जीव रहेंगे ही नहीं। केवल साफ-सुथरे पूंजीवादी ही इस सदी मे पदार्पण कर पायेंगे', फूलचंदजी ने कटुता से कहा।

'आप ज्यादा गंभीर हो गये है फूलचंदजी। इक्कीसवी सदी हम सबकी होगी। आम आदमी की होगी। समाजवाद की होगी और पूरी तरह लोकतांत्रिक होगी', मैं बोला।

फूलचंदजी फिर भभक गये, 'हां'''हां पूरी तरह लोकतांत्रिक होगी। चुनावों की जरूरत ही नहीं रहेगी। इक्कीसवी सदी में विकास इतने चरम पर होगा कि किसी को चुनावों की फिक्र ही नहीं होगी। चुनाव की बात करने वाला फिसड्डी और दकियानूस माना जायेगा।'

'आप फिर ज्यादा सोच रहे हैं। इक्कीसवी सदी इतनी जड़ नहीं होगी कि वह अपना मौलिक अधिकार ही भुला बैठेगी। इक्कीसवी सदी मे संवेदना और सहयोग होगा, परंतु यह सब होगा—इक्कीसवी सदी मे ही। आप आशा करें कि यह सब पंद्रह साल पहले ही होने लगे तो यह संभव नही है। वह इसलिए संभव नहीं है क्योंकि इक्कीसवी सदी के चिन्तन और बीसवी शताब्दी के चिन्तन मे रात-दिन का अंतर है', मैंने कहा।

'जमीन और आसमान का अंतर तुममें और मुझमें भी है। तुम चाटुकार हो तो मैं स्पष्टवादी। मैं तुम नहीं हिला सकता तुम हिला सकते हो। कहने का तात्पर्य यह है कि यह प्रचार बंद कर दो—वर्ना देश कहीं का नहीं रहेगा। समस्याओं से ध्यान हटाने का यह ढंग अमानवीय तथा प्रपंचपूर्ण है। सामयिक समस्याओं के प्रति जागरूक रहो। रोजी-रोटी और आवास की मूलभूत समस्याओं के हल खोजो, न कि सुखद कल्पनाओं के सहारे गरीब की मजबूरियों से खेलो', फूलचंदजी चीखे।

'क्या मतलब ?'

'मतलब यह है कि खिसियाओ मत। इक्कीसवी शताब्दी के पूर्वाभ्यास के बजाय यथार्थ को जियो। यथार्थ बड़ा कठोर और बेदर्द है। इसके इलाज की कार्यवाही करो। बाद मे ऐसा मत कहना कि इक्कीसवी सदी की एवज में मतदाता सोलहवी शताब्दी की हरकतें क्यों कर रहा है ?'

'तो करें क्या ?'

'करो यही कि जो लोग कम्प्यूटर में उस शताब्दी में पहुंच रहे हैं उन्हें पहुंचने दें। आप बीसवीं शताब्दी में ही बने रहें। बीसवीं शताब्दी का काम निपट जायेगा तब खुद-ब-खुद चले जायेंगे उस आशा भरी शताब्दी में।'

मुझे लगा मैं आसमान से गिरकर खजूर में अटक गया हूं। जिससे मेरा अस्तित्व न आसमान का है और न ही जमीन का। मुझे माफ करना, मैं न तो बीसवीं शताब्दी के काम का आदमी हूं और न ही इक्कीसवीं शताब्दी के काम का। मैं तो केवल अपनी एक अदद बीवी तथा छह अदद बच्चों का पालनहारा हूं—जिसे हर सदी में इसी रूप में रहना है। जो इक्कीसवीं सदी में जाना चाहे जायें मेरी बला से, परंतु मुझे न ले जायें। मुझे अपनी गृहस्थी की गाड़ी खींचने दें।

सरकार चल रही है

अभी जब राज्यों के मुख्यमंत्री अपने-अपने शासन की वर्षगांठ मना रहे थे तभी मुझे भी ध्यान आया कि अपनी घरेलू सरकार के गठन की चर्चा और उपलब्धियों का गुणगान क्यों न कर लिया जाय ? यह घोषणा करते हुए मुझे अत्यंत हर्ष है कि मेरी सरकार ने भी अपने ढाई वर्ष पूरे कर लिए है हालांकि पहले तो लोगों ने मेरी सरकार ही न बनने देने की ठान ली थी। परन्तु माता-पिता व मेरे जोड़-तोड़ तथा तिकड़म से आखिर सरकार बनाने में सफलता मिल गयी ओर इस प्रकार एक देहाती सामान्य रग-रूप की औरत का मेरे साथ पाणिग्रहण संस्कार करवा दिया गया। सरकार तो बन गयी लेकिन मैं ही जानता हूं सरकार चली कैसे है ? मेरे पडोसी बनाम विरोधी दल आज भी मेरी विफलताओ की चर्चा करते है, और तो और स्वय सरकार मे भागीदार सदस्यगण भी मुझे असफल निकम्मा और ढीला प्रशासक कहने से नही चूक रहे हैं। मैं स्वयं नही समझ पा रहा हू कि इन अपने घरेलू विरोधियों से मैं कैसे निपटू। वह तो मेरे सिर पर मेरे आलाकमान माता-पिता का हाथ है, अन्यथा सरकार कब की धराशायी कर दी गयी होती।

हालांकि इन गुजरे ढाई वर्षो मे कई बार नौबत यह आई है कि सरकार गिरते-गिरते बची है। वैसे शक्ति परीक्षण करवाया जाये तो मैं तत्काल गिर जाऊं। लेकिन अभी नौबत यह नही आई है। लेकिन यह स्पष्ट है कि मेरी पत्नी-बच्चा व तमाम पड़ोसी मुझसे 'असन्तुष्ट' हैं। वैसे मैं अब यह मानने लगा हू कि असन्तुष्ट होना आजकल फैशन और प्रगतिशीलता का द्योतक है। मैं स्वय असन्तुष्ट रहा, तो सरकार बनाने का मौका मिला। जो सन्तुष्ट है उसे क्या चाहिए, कुछ नही ? महत्वाकाक्षाओ के बल पर ही

आदमी का विकास सम्भव है लेकिन मेरी हार्दिक इच्छा है कि मेरे विरोधियों की महत्वाकांक्षाएं सदैव दबी रहें।

रहा सवाल उपलब्धियों का मैंने कहीं कमी नहीं छोड़ी है। मेरे शासन में बहुमुखी विकास हुआ है। मैंने अपने माता-पिता से मिली जीर्ण-शीर्ण विरासत को श्री सम्पन्न करने में बड़ी मेहनत की है। मसलन जब मैंने सरकार संभाली थी—तब केवल हम दो थे—आज आलाकमान की दया से चार हैं और इस मामले में आगे चरण जारी है। पिताजी के शासनकाल में प्रातःकाल छाछ पीने को मिला करती थी, अब बच्चे चाय तथा कॉफी पीते हैं। पहले सब्जी किसी मेहमान के आगमन पर बना करती थी, आजकल आमतौर पर घर में सब्जी छौंकी जाती है। पहले कई सप्ताह तक वस्त्र धुलते नहीं थे। अब कलफदार कपड़े पहनकर इतराता फिरता हूं। हालांकि इस सारी व्यवस्था में मेरी स्वयं की आय पर्याप्त नहीं है, लेकिन ओ०डी० व ऋणग्रस्त होकर भी मैंने इस व्यवस्था को जारी रखा है। इसे देखकर लोग मेरी सरकार को घाटे की सरकार कहने लगे हैं। जब सबकी सरकारें ही ऐसे चल रही हैं तो मेरे ऊपर यह लाछन क्यों? मैंने वर्तमान की चकाचौंध में अपने को, अपनी सरकार को तथा तथाकथित विधायक बनाम बच्चों को आगे बढ़ाने में कहीं कोई कमी नहीं रखी है। सबको कोई न कोई सुविधा देकर चुप करने का प्रयास किया है, ताकि मेरी सरकार जिन्दगी के बचे वर्ष भी ढाई वर्ष की तरह सकुशल गुजार सके।

कहते हैं नौ दिन चले अढाई कोस। मेरी सरकार पर यह बात खरी उतरती बताई, यह मेरा असन्तुष्ट ग्रुप कहता है। लेकिन मैं कहता हूं कि मेरा झौंपड़ा ढाई दिन में तैयार हुआ है। जो भी बन गया कम बात नहीं है। जनता पर्टी का शासन थोड़े ही है कि ढाई साल में सारा गुड़-गोबर हो गया। आजकल कायम रहना ही बड़ी बात है। वरना सरकारें कम गिरी हैं क्या। अन्तुले गये। भौसले गये, पहाड़िया गये, पता नहीं और कितने जाने वाले हैं लेकिन मैं नहीं जाऊंगा। यह तय है। मेरा जाना मजाक नहीं है।

विरोधी कहते हैं कि मेरे शासन में कानून और व्यवस्था नहीं रही है। मेरा उनसे कहना है कि कानून और व्यवस्था जब तक वे लोग हैं रह ही नहीं सकती और फिर यह भी है कि कानून और व्यवस्था रही तो मेरी सरकार

नहीं रहेगी। मेरी सरकार और कानून तथा व्यवस्था मे से एक ही बात रह सकती है। यही मेरी मौलिकता है कि जहा मैं हू वहां कानून तथा व्यवस्था का क्या काम ? सबके अपने कानून हैं। सबकी अपनी व्यवस्था है।

लोग कहते हैं कि मेरे शासन में भुखमरी और अकाल सर्वाधिक फैला है तथा राहत कार्यों में मैंने भेदभाव बरता है। मेरा कहना है कि यदि कोई भूख से या अकाल से मरता है तो इसमें मेरा दोष कहा है। राहत कार्य जितना केन्द्र के आलाकमान ने दिया उतना मैंने अपने व अपने समर्थकों के चुनाव क्षेत्रो मे बटवा दिया। जो लोग मुझे वोट नही दे सकते, उन्हें मैं राहत कैसे दे सकता हूं। वे मुझे चुनाव के समय 'राहत' नही दे सके तो वे फिर मुझसे अकाल और सूखे के समय राहत की आशा कैसे करते हैं ? यह भेदभाव नही हुआ, यह तो देने का लेना है। दुनिया का जो चलन है, उसी पर तो मैं चल रहा हूं। फिर जनता मेरी है वह भूखी रहे या प्यासी, इससे विरोधियो को क्या मतलब है ?

और फिर भाई यह तो मैं हूं कि ढाई साल तक सरकार चला लाया अन्यथा ढाई दिन भी सरकार चलाना कठिन होता है। कोई गाड़ी, रेल, प्लेन या स्कूटर चलाना थोडे ही है। मैंने वह सरकार चलाई है—जिसे सबने चलाने से मना कर दिया था। सड़ी-गली जीर्णावस्था को प्राप्त सरकार मे प्राण फूके है और आज मैं उसकी ढाई वर्ष की सालगिरह मना रहा हू तो सबके आग लग रही है। सरकार मेरी है, गिरती-पड़ती जैसी भी चल रही है, चला रहा हू, इससे लोगो को क्या ? आलाकमान का आशीर्वाद रहा तो मैं सबको परास्त करता हुआ सरकार चला ले जाऊगा।

पेयजल के लिए भी मैं पूरी तरह प्रयत्नशील हू। सुबह नल पर बाल्टी लेकर जल्दी तड़के उठकर खड़ा हो जाता हू, लेकिन नलों मे पानी ही नही आये तो, इसमें दोष मेरा क्या है ? गावों के तालाब-कुए सूख गये, वर्षा नही हुई तो मुझे क्यों कोसा जाता है ? इन्द्रदेव के कोप भाजन हम सब हैं। मैं तो नहर निकलवा सकता हू, पानी तो आयेगा, तब ही आयेगा। बिजली की कमी के लिए मैं जिम्मेदार कैसे हुआ, बिजली जलाओगे तो कमी आयेगी ही, बिजली जलाना कोई जरूरी नही है, घरो मे घासलेट का दिया जलाओ। मैंने अपने घर मे दिये की व्यवस्था की है, आप भी दीपक ही जलाइये।

घासलेट आराम से नहीं मिलता तो ब्लैक मे खूब मिल रहा है।

कुल मिलाकर कहने का तात्पर्य यह है कि थोडा बहुत धैर्य भी रखना चाहिए। असन्तोष की कोई सीमा नही है। सन्तोष का फल मीठा होता है। धैर्य करके देखिये, सन्तोष रख के देखिये, सब चीजे अपने आप सुलभ हो जाती है। फिर जैसा संयोग है, वह होके रहेगा। करम गति टारे नही टरे वाली बात जीवन मे चरितार्थ होती है। अच्छा-बुरा जैसा नसीब मे लिखा है—वही मिलता है। इसलिए मैं भी जैसा हू नियति समझकर स्वीकार कीजिये फिर कोई तकलीफ नही है। मुझे भी अवधि पूर्ण करने मे कोई परेशानी नहीं होगी।

मेरी सरकार चल रही है, चलती रहेगी, इसलिए दुखी मत होइये। यह तो चार बर्तन एक जगह होंगे, तो बजेंगे भी। आप लडें-झगडें, गिरें, पडें या बेदम होकर पस्त हो सरकार रूप मे स्थापित रहेंगे। अल्पमत मे भी बहुमत का सा शासन करेंगे। गिरने लगेगी तो, भजनलाल स्टाइल में नये विधायक आयात कर सरकार को खडा रखा जायेगा। यह ढाई वर्ष पूरा होने पर मुझे आपके आशीर्वाद और सहकार की जरूरत है।

एक सुझाव स्थायी सरकार के लिए

कोई बुराई नहीं है यदि कोई विधायक मुख्यमंत्री बनने की महत्वाकांक्षा रखता है अथवा कोई सांसद मंत्री-मण्डल में शामिल होने के सपने देखता है। प्रारंभ से ही हमें समझाया और बताया जाता है कि वक्त बहुत कम है कर लो जो भी करना है? बेचारे सांसद अथवा विधायक की तो उम्र ही कितनी-सी होती है। मध्यावधि चुनाव नहीं हुए तो वह पांच साल तक ही वह चोला रख पाता है। इन पांच साल में ही उसके सामने जिन्दगी के सम्पूर्ण लक्ष्य होते हैं, अपना कैरियर होता है जिसे बनाना है, अन्यथा बाद में खाओ धक्के। जनता चुनाव में दुबारा उनको चुन लेगी, अब यह मामला काफी संदिग्ध हो गया है। इसी दृष्टि से राजनेता ने अपना सोच भी समयानुसार बदल लिया है। तत्काल नये कायाकल्प के साथ नयी टोपी लगाकर, दल बदलकर नये वेश में जनता जनार्दन की सेवा में आता है और जयजयकार का वरण कर, फिर हो जाता है सत्ता की लड़ाई में मशगूल।

आजकल सत्तारूढ़ दल में रहकर अपने दल की सरकार का विरोध करना भी कैरियर बनाने के सूत्रों में आ गया है। यानि असन्तुष्ट रहना फैशन हो गया है। मुख्यमंत्री से पूछो कि आपके दल में असन्तुष्ट क्यों हैं और कितने हैं तो उसका उत्तर बड़ा बेतकल्लुफ होता है कि पद नहीं मिला इसलिए नाराज है और संख्या है इनकी कुल 10-20, उसके ऊपर स्थिति यह है कि आलाकमान उसे दूसरे ही दिन पद छोड़ने की बात कहता है और नयी मूर्ति स्थापित कर दी जाती है। असन्तुष्टों में परस्पर खींचतान और जोड़-तोड़ की राजनीति चलती है और इस प्रकार एक नयी सरकार की स्थापना होती है। यह एक चक्र हो गया है। मेरा इसमें सुझाव यह है कि

सत्ता के प्रति सांसदों एवं विधायकों की बढ़ती जिज्ञासा और ललक को देख-कर सरकार का गठन कुछ नये तरीके से ही करना चाहिए। यह व्यवस्था पूर्ण लोकतान्त्रिक भी होगी तथा समाजवादी लक्ष्यों की पूर्ति करने वाली भी। इसके लिए यदि केन्द्र तथा राज्यों में मेरे द्वारा नीचे सुझाई जाने वाली सरकार का गठन हो तो आये दिन होने वाले झगड़े-फसादों से बचा जा सकता है और देश को ही नहीं, सम्पूर्ण विश्व को एक नयी दिशा दी जा सकती है।

मान लिया एक विधान सभा में कुल 200 सदस्य हैं। सत्तारूढ़ दल के सदस्य 150 हैं तथा विरोधियों की संख्या 50 है। हमारे सामने पूरे पांच वर्ष हैं। एक मुख्यमंत्री आम तौर पर अपने मंत्री-मण्डल के सदस्यों की संख्या लगभग 30 रखता है, तो प्रथम सरकार जो बने वह केवल एक साल के लिए बने, फिर दूसरे साल उसी दल के अन्य 30 सदस्यों को अवसर दिया जाये, इस तरह पूरे पांच वर्ष में सत्तारूढ़ दल के पूरे 150 सदस्यों को सत्ता का सुख भोगने का पूरा मौका मिलेगा तथा असन्तोष की बीमारी से बच लिया गया वह अलग। इसके साथ यह भी किया जा सकता है कि मंत्री-मण्डल के सदस्यों को नम्बर एलॉट किये जायें। मुख्यमंत्री नं० एक, मुख्य-मंत्री नं० दो, मुख्यमंत्री नं० ग्यारह या मुख्यमंत्री नं० तीस। इससे सबके 'ईगो' शान्त होंगे। विभागों के अनुसार पोर्ट फोलियो न देकर मुख्यमंत्री नम्बर से नये मंत्रियों को रूनाक किये जाने चाहिएं। इससे लोगों के मन में मुख्यमंत्री उखाड़ने के रोज-रोज जो प्लान आते हैं कि आज भोसले हटाओ, आज माथुर हटाओ, आज जगन्नाथ मिश्र हटाओ या आज सोलंकी हटाओ से भी पूर्णतः निजात मिल जायेगी क्योंकि एक साल बाद सबको हटना है। नये लोगों को सत्ता का चाव लगा रहेगा वे इसलिए कोई हरकत नहीं करेंगे कि आगे उनकी भी सरकार बनेगी, यदि उन्होंने गड़बड़ की तो पदच्युत ग्रुप हमारे सत्तारूढ़ होने पर धींगामुश्ती करेगा। इसलिए यह व्यावहारिक नुस्खा वर्तमान में सत्ता के प्रति लोगों के बढ़ते झुकाव को देखते हुए अप-नाया जाये तो सरकारें काम कर सकती हैं और लोग कमाकर खा सकते हैं।

इसमें एक व्यावहारिक दिक्कत यह आ सकती है कि लोग यह कहने

लगेंगे कि पहले सरकार हमारी बने, इसी को लेकर बखेड़ा हो सकता है। इसके लिए उपाय यह है कि 150 सदस्यों की चुनाव के तत्काल बाद सीनियरिटी लिस्ट घोषित कर दी जाये, यह वरीयता सूची सदस्यों की जन्मतिथि से बनाई जाये जिसमें अन्य कोई पेचीदगी नहीं हो। यदि इसमें मैरिट को शामिल कर लिया गया तो गड़बड़ फिर हो सकती है। कोई कहेगा कि साहब मैंने फलां मुख्यमंत्री को गिराने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी इसलिए मैं मैरिट में ज्यादा हूं इसलिए मेरा नाम ऊपर होना चाहिए इसलिए वरीयता सूची में मैरिट का लफ्ज रखा जाना ही नहीं चाहिए। उम्र के हिसाब से बनी सूची सबको मान्य हो और क्रमानुसार सत्ता की [illegible] फाकने का समानता से सबको मौका प्रदान किया जाये।

एक और लाभदायी सुझाव यह भी है कि सरकारों को [illegible] देकर नहीं बांधना चाहिए। सारे मन्त्रियों यानि तीनों [illegible] छूट होनी चाहिए कि वे अपने-अपने सूत्रों के हिसाब से [illegible] सूत्र खुद बनाओ और कमाओ इससे मुख्यमंत्रियों को [illegible] में सुविधा होगी और सरकारें निर्विघ्न चलती रहेंगी। [illegible] उपस्थित कर सकते हैं कि फिर जनसेवा का [illegible] 150 सदस्य जनप्रतिनिधि नहीं हैं, ये भी [illegible] की सेवा फिलहाल क्या हो रही है। [illegible] है, टैक्स लग रहे हैं—तो फिर यह बात [illegible] जनसेवा अब कोई इतना महत्वपूर्ण [illegible] रता से विचार विमर्श हो। [illegible] लाभों में निहित होनी है, उनमें 150 [illegible] उसमें जनता को यह तो लाभ है [illegible] सरकार चाहिए ताकि हम [illegible] अंधा, लूला, लगड़ा कैसा [illegible] होता है। इसलिए सरकार [illegible] उक्त बताये अनुसार [illegible] हो सकता है।

लला मत अइयो खेलन होरी

'लला, फिर अइयो खेलन होरी' की जगह जब लला ने 'लला, मत अइयो खेलन होरी' सुना तो दग रह गया। सन्निपात के रोगी की तरह गोपी का कातर मुख निहारने लगा। उसे अपनी इस परमप्रिय गोपी से ऐसी आशा नही थी। समाधान के लिए आखिर लला ने पूछ ही लिया, 'हे गोपी, आज बात क्या है? तुम बहकी-बहकी बाते क्यो कर रही हो? जिस होली के लिए तुम स्नेहिल आमत्रण दिया करती थी—आज उसी के लिए मना कर रही हो, आखिर बात क्या है—क्या मुझसे अनजाने मे कोई गलत हो गयी है?'

गोपी लला की अन्तर पीड़ा समझ गयी—इसलिए मरहम लगाते हुए बोली, 'नही मेरे लला, तुम और गलत बात···? सोच भी नही सकती।' फिर गोपी पीडा के गहरे समन्दर मे डूबकर कहने लगी, 'लेकिन लला, वैरी जमाने की चाल को भला रोका कैसे जा सकता है।'

'साफ कहो गोपी, पहेलिया मत बुझाओ, आज जैसा दुःखी मैंने तुम्हें पहले कभी नही देखा है, क्या किसी ने कुछ कह दिया है? आखिर तुम डरी-डरी निरुत्साहित-सी क्यों हो रही हो?' लला गोपी की पीड़ा जानने को बेताब था।

'बात कुछ नही लला—होली का मजा दिनोदिन किरकिरा होता जा रहा है, इसी बात से पीड़ित होकर मुझे तुम्हे यह कटु सत्य कहना पडा है, और तो क्या कहूं मैं तुम से।' गोपी बोली।

लला समझ गया—गोपी कुछ छुपा रही है। इसलिए वह बोला, 'गोपी जो भी मन में है वह साफ क्यों नही बताती। क्या तुम्हे तुम्हारे घरवालो ने बरज (मना) दिया है?'

गोपी के कटोरी जैसे नैन झुक गये। लला समझ गया गोपी घरवालों से दुखी है, इसलिए वह बोला, 'तो ऐसी क्या बात हो गयी गोपी? क्या तुम्हारे घरवालों को मेरा आना रास नहीं आता?'

'तुम समझते क्यों नहीं लला, ऐसी कोई बात नहीं है।'

'तो फिर साफ बताओ संकोच क्यों कर रही हो? मैं उस कठिनाई को एक पल में हल कर दूंगा, लेकिन मैं होली का मनभावन आमंत्रण नहीं छोड़ सकता।' लला बोला।

'तुम कुछ नहीं कर सकते, लला स्थिति तुम्हारे काबू से बाहर है। तुम्हारे और मेरे हाथ की बात होती तो मैं तुम्हें होली पर आने के लिए कभी नहीं मना करती। लेकिन स्थितियां इतनी बदल गयी हैं कि इसके अलावा चारा कुछ है ही नहीं। तुम समझो लला, तुम आओ मैं तुम्हें प्रेम से रंग भी न लगा सकूं। जो रंग पैसे का ढेर सारा आता था, अब आसमान छूने लगा है। वही भरी गुलाल पूरी परात भरकर आती थी अब छोटी-सी थैली में चुटकियों से लेकर लगानी पड़ती है—मेरा मतलब, तुम्हारे लिए मावे की मिठाई में केवल दो पेड़े ही रख सकूं यह हास्यास्पद है। यानि बाजार भाव—यो महंगाई है न उसकी मार से हम लोग—'

गोपी की बात सुनकर लला बगलें झांकने लगा। इस लाइलाज बीमारी का हल तो उसके स्वयं के पास भी नहीं था। उसे यह तनिक भी आभास नहीं था कि गोपी और उसके बीच महंगाई इतना बड़ा कारण बनकर—होली का आमंत्रण तक बंद करवा बैठेगी। सच है, गोपी भी कितने दिनों तक बरदाश्त करती। आखिर इस होली को तो उसने मना कर ही दिया कि लला अगली होली को हमारे यहां मत आना। तभी उसकी आंखों में पिछली होलियों से लेकर वर्तमान होली तक का तुलनात्मक मानचित्र घूम गया। गाढ़े रंग के कढ़ाव-गुलाल-अबीर के पर्वत जैसे ढेर और बीसियों थालों में बीसियों तरह के पकवान-व्यंजन और मिठाइयां सब नदारद हैं। उसकी एवज बाल्टी में फीका-फाका रंग, कागज की छोटी-सी थैली में मिट्टी मिली गुलाल और स्टील की छोटी-सी प्लेट में कुल दो पेड़े। सच है, महंगाई ने गोपी को बहुत बुरी तरह तोड़ दिया है। लला को लगा जैसे वह बहुत बड़े अपराध में पकड़ा गया है,- इसलिए अपराध बोध में पानी-पानी हो गया

और वह गर्दन झुकाये घर लौट आया।

घर आया तो मां बोली, 'क्या बात हो गयी रे लला ? क्या कोई गोपी तुमसे आज होली ही नहीं खेल पाई ? आज तो तेरे चेहरे पर रंग लगा ही नहीं है और जो लगा है वह फीका-फीका है। क्यों, बात क्या हो गयी ? ले यह पिचकारी जा उन पर रंग डाल आ।'

लेकिन लला को तो जैसे सांप सूंघ गया था। बोला ही नहीं। मां को क्या पता कि लला को महंगाई ने मार दिया। इस मरी महंगाई ने उसकी प्रिय गोपिका को उससे सदा-सदा के लिए अलग कर दिया है। जब मां नहीं मानी तो लला ने यह कहकर पिण्ड छुड़ाया कि आज तबीयत ठीक नहीं है और सिर में दर्द है। मां क्या जाने कि लला का माथा कैसे दुःख रहा है।

लला लेटा रहा—मां गिलास में चाय ले आई। लला झट से उठा कि दूध पीने से तबीयत हल्की हो जायेगी। चाय देखकर लला का माथा ठनका और जब चाय पी तो कसैली और फीकी-फीकी होने से लला मुंह बिगाड़ने लगा। लला को विश्वास हो गया—महंगाई उसके घर में भी पैर फैलाने लगी है, दूध की जगह चाय, वह भी बिना चीनी की या कम चीनी की। उसने मां की तरफ देखा, तो मां बोली, 'लला दूध तो रात को पी लेना। हलवाई ने दूध के भाव बढ़ा दिये हैं।

लला को बड़ा अफसोस हुआ कि महंगाई का क्रम पता नहीं चल कब से रहा है और पता उसे आज चला है। उसे अब तक गाय चराने का और जंगल में घूमने का बड़ा आश्चर्य हुआ। यदि वह घर-परिवार में रहता तो कुछ प्रयास करता और बाजार-भावों को बढ़ने से रोक पाता। लेकिन अब तो पानी सिर के ऊपर से गुजर रहा था इसलिए कुछ भी कर पाना लला को कठिन लगा। वह चाय पीकर पुनः पलंग पर पसर गया। मां से मक्खन मांगने का वह साहस नहीं जुटा पाया। उसे लगा दूध-दही की नदियां सूख गयी हैं। मां उसे अब शायद दूध-दही व मक्खन कुछ भी नहीं दे पायेगी—फिर बेचारी गोपी तो कर भी क्या सकती है ? लला ने करवट बदली और दर्द के मारे कराहा। उसके मानस में अभी भी गोपी का वचन बार-बार घूम रहा था—'लला, मत अइयो खेलन होरी—लला, मत अइयो खेलन होरी', लला ने लिहाफ सिर तक ताना और नींद की प्रतीक्षा करने लगा।

आना दीवाली का चौबीस तारीख को

कर्मचारी लाल के पास उद्धव गये तो वह बोला, 'ऊधो, रास न आई दीवाली।'

उद्धव बोले, 'क्यों ?'

कर्मचारी लाल ने जवाब दिया, 'हे उद्धव महाराज दीवाली महीने के आखिर में आई है अत: उनके सफलतापूर्वक आयोजन का प्रश्न ही नहीं उठता।' सरकारी कर्मचारी की यथार्थवादी बात सुनकर उद्धव सकते में आ गये। और वह खिसियाकर मथुरा लौट गये और कृष्ण से जाकर कहा कि इस बार न तो दीवाली सही ढंग से मन पाएगी और न गोवर्धन पूजा हो पाएगी। क्योंकि सरकारी कर्मचारी कड़की में जी रहा है। दीवाली 24 की है तथा इस माह का वेतन दीवाली के बाद मिलेगा। सरकार पहले तनख्वाह नहीं दे रही है। उद्धव की बात सुनकर कृष्ण भी सन्नाटे में आ गये—सरकार के सामने वे भी क्या कर सकते थे ?

'सही भी है आठ तारीख को तनख्वाह से हाथ धोने वाले कर्मचारी से यह कहा जाये कि दीवाली चौबीस तारीख को मना, तो सहज कल्पनीय है कि वह दीवाली कैसे मनायेगा ? कड़की के पटाखे, फीकी खिसियानी हंसी की फुलझड़ी तथा तेल के अभाव में दिल जलाने के अलावा और करेगा भी क्या ? यही हुआ सरकारी कर्मचारी के साथ। बच्चे खील-बताशों को तरस गये तथा पत्नी ने पुरानी साड़ी से काम चलाया। जहां समझौता नहीं हो पाया वहां कर्मचारी लाल कहीं झगड़े-फसाद में, कहीं ऋण के चक्रव्यूह में फंस गया। दीवाली को उत्साहपूर्वक मनाने का संकल्प जिसने भी लिया वही मारा गया। दीवाली कहीं कैसे रीति-रिवाज के साथ मनाई जाती।

है—कहीं कैसे—कहीं कैसे ! परन्तु सरकारी कर्मचारियों की दीवाली की देश भर में एकरूपता है। वह दीवाली तनख्वाह के साथ मनाता है। अब तो वैसे कई विभागों के कर्मचारी वेतन की परवाह नहीं करते। वे लोग भ्रष्टाचार—रिश्वतखोरी तथा बेईमानी का भी पूजन करके दीवाली मना लेते है ? ये कर्मचारी बड़े सुखी हैं। इन्हें तनख्वाह वगैरह की ज्यादा चिंता नहीं रहती। ये लोग आम आदमी का खून चूसकर तरोताजा रहते है और लक्ष्मी पूजन करते हैं।

मेरे पडोसी कर्मचारी लाल ऋण लेने के बड़े शौकीन हैं। सरकारी क्षेत्र अथवा प्राइवेट सैक्टर जहा से भी ऋण किसी भी ब्याज दर मे मिले, वे एक बार प्राप्त कर ही लेते हैं। क्योंकि वे उऋण होना सीख नही पाये हैं। दीवाली के ठीक चार दिन पहले मेरे पास आये और बोले, 'शर्मा, कुछ करो—दीवाली मरी चौबीस को आई है—एक को लौटा दूगा, कुछ रुपयो का इतजाम करो।'

मैंने कहा, 'डियर कर्मचारी लाल, मैं तुम्हारा ही हम पेशा हू। मेरे ऊपर रहम करो—यह कहर किसी और पर बरपाओ ?'

'अरे यार क्यों दीवाली का मजा किरकिरा करते हो। दो सौ दे दो—दो हजार कर लूगा ?' कर्मचारी लाल ने पैंतरा फेंका।

'दो सौ से दो हजार कैसे करोगे ?'

'द्यूत क्रीड़ा से।'

'जब पैसे नहीं हैं तो कोई जुआ खेलना डॉक्टर ने थोडे ही बताया है।'

'डॉक्टर ने नही—जरूरतो ने बताया है शर्मा। पता चलेगा तुम्हें जब बच्चे पैदा करोगे। गृहस्थी का मायाजाल अभी देखा नही है। काम सबको पड़ते हैं। कल तुम्हें भी मुझसे काम हो सकता है। तब क्या मैं तुम्हारे साथ कोई रियायत कर पाऊगा ? कदापि नही, मैं उस समय तुम्हे नही बख्श पाऊगा।' कर्मचारी ने खुली चुनौती का बिगुल बजाया।

मैंने कहा—'कैसी बहकी-बहकी बाते कर रहे हो—कर्मचारी होकर दूसरे कर्मचारी की मजबूरियों को नही समझ पा रहे हो ? पैसे होते तो तुम्हे बिना किसी बहस के सौंप देता। परन्तु हाय री दीवाली आई चौबीस को। तुम महीने के शुरू मे आ जाते तो दूध वाले को धार मे दे देता।'

'उपदेश देने की जरूरत नहीं है शर्मा। इंतजाम कर सकते हो तो करो, वरना इसका दुष्परिणाम भुगतने को तैयार रहो। मैं जितना सभ्य और शिष्ट हूं, उतना ही प्रतिशोध में सुलगने पर दुष्ट हो जाता हूं।' कर्मचारी ने दांत पीसे और आंखें निकाली। मैंने डरकर अपनी पत्नी को आवाज दी। कर्मचारी लाल चप्पल पहनकर रफूचक्कर हो गया। वह मेरी पत्नी का स्वभाव जानता है। वाक्युद्ध में मेरी पत्नी पूरे मोहल्ले में अपने किस्म की अकेली झांसी की रानी जैसी है। मुश्किल के समय मैं अपनी पत्नी को याद करता हूं और वही मेरी रक्षा भी करती है।

सवाल यहां पर एक कर्मचारी लाल का नहीं है, उन लाखों कर्मचारी लालों का है—जो कि चौबीस तारीख के भंवर में फंस गये हैं। क्या दीवाली चौबीस तारीख को ही आती रहेगी? दीवाली को चौबीस तारीख को नहीं आना चाहिए। आना ही है तो आठ तारीख तक आ जाए—वरना भुगते उसका परिणाम। न दीप जलेगा—न पटाखे चलेंगे। न मिठाई बटेंगी और न सजावट होगी। महिलाएं रो-रोकर दीपदान करती रहेंगी, न साज-श्रृंगार होगा न ही खुशी का माहौल होगा।

दीवाली के बाद कर्मचारी लाल की पीड़ा से द्रवित होकर उद्धवजी कृष्ण से बोले, 'हे कृष्ण इन अनाथ सरकारी कर्मचारियों की वजह से आपका बड़ा अपमान हुआ है—अत. कोई उपाय करिये।'

कृष्ण बोले, 'कुछ नहीं उद्धव, हो सके तो तुम उन्हें निर्गुण ब्रह्म की उपासना का मंत्र दे आओ—ताकि न रहेगा बांस न बजेगी बांसुरी।'

उद्धव सोचने लगे और सरकारी कर्मचारी दीवाली के चौबीस तारीख को आने पर पछताने लगा।

समस्याएं

जी हां, आज संसार में समस्याओं की कोई कमी नहीं है। जिधर नजर करो, मुंह फाड़े खड़ी हैं। ये समस्याएं क्यों पैदा हुईं ? यह फालतू की बात है। क्योंकि सत्य कटु होता है। यदि हमने उनका कारण बताना शुरू कर दिया, तो इससे कई तबकों के नाराज होने की समस्या आ खड़ी होगी। हम क्यों व्यर्थ समस्या मोल लें। हम तो केवल आपको यह बतायेंगे कि आज किन लोगों के सामने भयंकर समस्याएं हैं।

घर पर :

समस्याओं का दायरा बहुत लम्बा-चौड़ा है। पहले हम समस्याओं का ब्यौरा घर से ही शुरू करते हैं। घर में पति है, पत्नी है और बच्चे हैं। तीनों के सामने अपनी-अपनी समस्याएं हैं। पति जो घर का सर्वेसर्वा कहा जाता था—अब नहीं पहले ! अब घर की सर्वेसर्वा पत्नी है। उसके सामने जितनी समस्याएं हैं मेरे खयाल से उतनी समस्याएं एक प्रधानमंत्री के पास भी नहीं होंगी। बेचारा हाड़-मांस का पुतला यह पति समस्याओं से घिरा हुआ है। इसकी सबसे पहली समस्या है उसकी अपनी पत्नी। कभी तो उससे इस बात पर कुपित होती है कि उसने शादी की हाँ क्यों की थी। खैर दुर्भाग्य, हो गया सो हो गया। पत्नी की मांग कभी थकती नहीं है। आज साड़ी नहीं है, तो कल ब्लाउज नहीं। आज ब्लाउज नहीं, तो कल बच्चों के पास कपड़े नहीं, कपड़े हैं तो स्वयं के पास चप्पलें नहीं। आज यह फैशन गया, तो कल वह फैशन आया। आज यह सिनेमा गया, तो कल वह नया आ गया। आज रसोई में डालडा है, तो स्टोव में तेल नहीं। आज कोयले

नहीं, तो कल गेहूं नहीं, गेहूं है तो नहाने का साबुन नहीं, पाउडर नहीं, क्रीम नहीं, लिपस्टिक नहीं, रेडियो नहीं, पैसा नहीं और कभी-कभी तो वह कह देती है—कुछ भी नहीं, मेरी तो तक्दीर ही फूट गयी सो तुम जैसा आदमी ···कहने का मतलब यह है कि उनकी मांग-सूची में मांगों की कमी नहीं है, कमी तो है केवल उनको पूरी करने वाले की। पति जो बेचारा 300-400 रुपये मासिक वेतन पाता है—भीगी बिल्ली बना या तो सुनता रहता है, अन्यथा ऋण के बोझ से दबा चला जाता है।

दूसरी समस्या पति के सामने है, वह है—उसके एक दर्जन बच्चे। जिनकी कापी नहीं, किताब नहीं, कलम नहीं, ड्रेस नहीं, नहीं-नहीं की शब्दावली बेचारे पति के दिमाग में सिरदर्द के रूप में चिपकी रहती है। और भी उसके सामने कई समस्याएं हैं। जैसे उसका अपने ऑफिस का साहब। जिसके मुंह से वाक्य निकलते ही रहते हैं—क्या खाक काम करते हो, सो रहे हो क्या? सोना है तो घर जाओ। काम करते जी मत चुराओ, यह भी कोई तरीका है, काम करने में बड़े नाचर हो, यह भी कोई लिखने का तरीका है, चिचड़-पिचड़ लिख दिया, कल की छुट्टी नहीं मिलेगी।

कभी टाइम पर भी आते हो। तुम्हारी पत्नी बड़ी खूबसूरत है—आदि तरह की बीसों बातें हैं, जो बेचारे को दिन भर सुननी पड़ती हैं। इसके बाद देखिये बेचारे पति की दुर्दशा—राशन की क्यू में खड़े तीन घंटे हो गये, पसीने में नहा रहा है, एक लीटर तेल के लिए, एक साबुन की टिकिया के लिए, पांच किलो गेहूं के लिए और दस किलो कोयले के लिए। जैसे-तैसे करके उसे यह सब प्राप्त करना होता है। नहीं करता तो शाम को भूख-हड़ताल, बीवी-बच्चों द्वारा मिला-जुला आंदोलन शुरू। खैर, अब हालांकि पति के सामने हजारों समस्याएं हैं, अब हम उनको नहीं गिनायेंगे और यह पति-पुराण यहां समाप्त करते हैं।

पत्नी के सामने भी समस्याओं की कमी नहीं है। फर्क यह है—पति की समस्या है पत्नी और पत्नी की समस्या है पति, जो उसकी आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं कर पाता। अभी उपर्युक्त बातें जो मैंने बताईं वे ही पत्नी की मूल समस्याएं हैं। बच्चों की भी अपनी इसी तरह की मूलभूत समस्याएं हैं, जो माता-पिता द्वारा पूरी न किये जाने पर यह कहते हैं—

काश ! ये मर गये होते, तो ठीक होते।

मेरे ख्याल से यदि हम अलग तबके की समस्याएं अलग-अलग देखेंगे, तो समय बहुत ज्यादा लग जायेगा और मुझे लिखना भी ज्यादा पड़ेगा। अतः, हम कुछ मुख्य व्यक्तियों की समस्याओं का संक्षिप्त में मिला-जुला दर्शन करेंगे।

विद्यालय :

विद्यार्थियों की—इनकी समस्याएं भी विश्व की जटिलतम समस्याओं में से हैं। खेद है कि विश्व की कोई भी सरकार इनकी समस्याओं को आज तक हल नहीं कर पाई। बड़े अफसोस के साथ लिखना पड़ रहा है कि इन समस्याओं को हल करने के लिए बेचारे विद्यार्थियों को हर साल आंदोलन, अनशन और भूख-हड़ताल जैसे निकृष्ट तरीके अपनाने पड़ रहे हैं। नहीं तो बेचारे विद्यार्थियों को इन कामों से क्या मतलब ? विद्यार्थियों की समस्याएं, जिनके कारण उन्हें हड़तालें आदि करनी पड़ती हैं निम्न हैं—हमको बिना परीक्षा दिये पास किया जाना चाहिए, कालिज कैंटीन में समोसे का आकार छोटा क्यों कर दिया गया ?, वह प्रोफेसर निकम्मा है, उसका ट्रांसफर किया जाय, कालिज में उपस्थित होना विद्यार्थियों के लिए कोई जरूरी न हो, हमारे स्वतंत्र विचरण पर किसी तरह की पाबंदी न हो, यौन-शिक्षा रखी जाये। इसी तरह की करोड़ों समस्याएं हैं, जिनके अभाव में विद्यार्थियों को अन्य सैकड़ों समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। आशा है, सरकार इस तरफ ध्यान देगी। लेखकों की कलमगीरी की समस्याएं भी अब दिनोंदिन बढ़ती जा रही हैं, जिसमें नये लेखकों की हालत तो बड़ी खस्ता है।

नया लेखक जो लिखता है, कम्बख्त सम्पादक उसे छापने का कष्ट ही नहीं करता। फिर भी उसका धैर्य सराहनीय है कि खेदसहित वापस होने की स्लिप लगकर रचनाएं वापस होने के बावजूद भी वह अपना सहयोग सम्पादकों का सिर खपाने के लिए हमेशा देता रहता है।

साहित्य-क्षेत्र :

मैं एक ऐसे नवोदित लेखक से वाकिफ हू—जिसने लिख-लिखकर देश मे कागज और पोस्टेज महगा करा दिया है। यानी उसने लिखते-लिखते अपना आधा कमरा पाण्डुलिपियों से भर दिया था। पर हुआ क्या ? एक दिन वह रात को चिमनी जलाये साहित्य-सृजन कर रहा था। एकाएक उसे नींद ने धर दबोचा और उधर पाण्डुलिपियों ने आग पकड़ी—लेखक महोदय की नींद खुली, लेकिन जब तक आग पर काबू पाया जाता, तब तक पाण्डुलिपिया जलकर राख का ढेर हो गयी थी। दूसरे दिन वह आकर मेरे पास बैठा और खूब रोया। मैंने उसे सान्त्वना दी—क्यों चिन्ता करते हो यार ! अभी कुछ ही दिनों में और लिख लेना। पहले से कुछ ज्यादा मेहनत करना। मेरे सान्त्वना भरे शब्दो से उसे जोश आया। आज फिर वे ही ठाठ है—रचनाए कही नही छपी है, लेकिन उसके पास उसकी रचनाओ से उसका आधा कमरा फिर भर गया है। मैं दरअसल अपनी मुख्य बात से भटककर आपको एक नये लेखक की समस्या क्या सुनने लग गया, बात थी लेखको की समस्याएं।

आज लेखक के सामने कागज की समस्या है, क्योकि वह जो भी सामग्री प्रकाशनार्थ भेजता है, उसका उपयोग पत्रिका वाले कागज के अभाव मे समय पर जल्दी नही कर पाते और फिर यदि छाप देते हैं, तो पारिश्रमिक के लिए दो जोडी चप्पलें प्लास्टिक की तुड़वा डालते है। आज बैंक बन्द है, आज बैलेंस मे पैसे नही है। इसी तरह के बीसों बहानों द्वारा वे लेखक को समस्याओं से घेर देते है। क्योंकि जब उनके पास पारिश्रमिक नही पहुचता, तब उनकी श्रीमतीजी के लतीफे और व्यग्य-बाण लेखक महोदय को पस्त कर देते है। फिर लेखक के सामने समस्या आती है रोज-रोज के डाक-खर्च की। जिसे केन्द्रीय सरकार ने अब और बढ़ा दिया है। इस समस्या के समाधान के लिए लेखकों के हितार्थ सरकार एक प्रस्ताव पर विचार कर रही है, जिसमे कहा गया है कि सरकार एक लेखक से निश्चित क्रम मे कुछ धन-राशि लेकर उसके नाम एक लाइसेंस जारी करेगी। जिन लेखकों के पास यह लाइसेंस होगा, वे बिना टिकट लगाये

अपनी डाक देश के किसी भी कोने में भेज सकेंगे। नये लेखक-बन्धु कृपया इस योजना का लाभ उठायें।

राजनीतिक मंच :

नेता एवं मंत्रियों की समस्याएं वास्तव में समस्याएं हैं। कल उस जगह भाषण देना है, जिसका मैटर किसी से तैयार करवाना है। कल विरोधी दल की सभा में पत्थर फिकवाने हैं, बाढ़ और अकाल के लिए जाली रसीदों पर चन्दा इकट्ठा करना है। उसकी नौकरी लगवाना है, उसका ट्रांसफर कैंसिल करवाना है। कभी भी सत्य नहीं बोलना है। कथनी-करनी में फर्क ही अपने जीवन का ध्येय बनाना, वोट प्राप्त करने के हथकण्डे, झूठे आश्वासनों द्वारा जनमानस बरगलाना, आम सभाओं में सबके बीच बैठना, प्रश्नोत्तर के समय हल्का करके सदन में बैठना, प्रश्नोत्तर के समय हो-हल्ला करके सदन से उठकर चल देना—ये कुछ समस्याएं हैं, जो नेताओं एवं मंत्रियों को अपने जीवन को सुरक्षित रखने के लिए सीखनी पड़ती हैं और कुछ का धैर्यपूर्वक सामना करना सीखना पड़ता है। अन्त में हमारी समस्या यह है कि श्रीमतीजी का कहना है कि आप लिखते ही क्यों हैं और इस समय तो खासकर वे इस लेख पर बहुत ज्यादा रुष्ट हो रही हैं। अतः, सम्पादक जी से अनुरोध है कि वे या तो इस लेख को न छापें और यदि छापें तो प्रकाशित प्रति न भेजें। कृपया, पारिश्रमिक भेजना न भूलें। अन्यथा हमारे यहां कई समस्याएं खड़ी हो जायेंगी।

जद फैल्यो फिल्मोनिया

न तो फिल्म बनाना बुरा है और न ही फिल्म में काम करना बुरा। बुरा तो तब है कि हम इस संकल्प से मुकर जायें। मेरे प्रदेश में भी फिल्म बनाने की होड मची हुई है, लोकल निर्माताओं में यह बात इतनी गहराई में घर कर गयी है कि आसानी से अब उन्हें कुछ भी समझाना या भले-बुरे की कहना फिजूल है। इस बढ़ती लोकप्रियता को देखकर लगने लगा है कि प्रदेश का शेखावाटी क्षेत्र बंबई के बाद देश की दूसरी बड़ी फिल्म नगरी बन जायेगा। आज भी शेखावाटी क्षेत्र में जाकर देखा जा सकता है कि यहां स्थानीय निर्माता, निर्देशक और कलाकार 'वैभवता की और, [illegible]' अंदाज में अपनी यूनिटों के साथ डेरा डाले पड़े हैं। यहां के निर्माता-निर्देशकों में किसी के मन में मृणाल सेन बनने की,, किसी के मन में बासु चटर्जी की [illegible] के मन में श्याम बेनेगल बनने की चाह है तो कोई चाहता है कि मनमोहन देसाई, बी० आर० चोपड़ा, बी० आर० इशारा या ताराचन्द बड़जात्या बन जाऊं। इस लाइलाज बीमारी का [illegible] को लगा है, न नींद आती है और न जागने पर मन लगता है। यही [illegible] की स्थिति है। स्थानीय धरमिंदर, जीतेंदर और [illegible] ने [illegible] बासु चटर्जियों तथा मनमोहन देसाइयों को अपनी [illegible] बांध लिया है कि स्वयं इन निर्माताओं का मन फिल्म में [illegible] और मचलने लगा है।

मेरे एक मित्र के [illegible] हैं। [illegible] हैं। वे भी किसी [illegible] ताम बच्चन की ग्रिप में आ गये। फिल्म बनाने का [illegible] दिन वे मेरे यहां आये तो [illegible]

लते रहे। मैंने कहा, 'सेठजी, क्या बात है, कहिये तो सही ? आज बेचैनी कुछ ज्यादा है। देखिये, मुझे बताइये। हो सकता है मेरी बुद्धि का तनिक योगदान सभव हो सके ?'

सेठजी बोले, 'बेचैनी कुछ नही लाला। तुम्हे मै यह शुभ समाचार देने आया हू कि अगले महीने की पांच तारीख को अपनी पहली फिल्म का मुहूर्त है सो तुम आना।'

मैंने सेठजी को एक भरपूर नजर से ऊपर से नीचे तक, चौककर, कुछ दूर हटकर देखा। सेठजी मे कोई परिवर्तन नहीं था। वही बाहर निकला हुआ पेट, थुलथुल काया पर लगा कुभकर्ण का सा मुखौटा और उस पर चिपकी कौड़ी-सी दो आखें। मैं बोला, 'यह क्या करिश्मा करने जा रहे हो सेठजी ? महेंद्र से भी पूछा है !'

महेंद्र सेठजी के लड़के का नाम है और मेरा दोस्त है। सेठजी बोले, 'वह बेवकूफ है, समझता नही। कहता है कि नायक की भूमिका वह करेगा। इसलिए इस पर सलाह करने तुम्हारे पास आना पडा है।'

'सलाह का वक्त तो निकल गया सेठजी, जब मुहूर्त हो तय हो गया तो। लेकिन है यह जोखिम का काम और फिर महेंद्र को नायक बनाने पर तो फिल्म के फ्लाप होने के आसार सौ फीसदी है, इस पर जरा विचार कर लेना।' मैंने कहा तो सेठजी कुछ गलत सोच गये। बोले, 'लाला लगता है फिल्म मे हीरो बनने की लालसा तुम्हारे मन मे भी अगड़ाई लेने लगी है। लेकिन चिन्ता मत करो। अगली फिल्म मे हीरो तुम ही बनोगे ?'

मैंने कहा, 'नहीं जी, हीरो वीरो मुझे नही बनना। पूरे एक वर्ष बबई की खाक छानने के बाद मैं इस निष्कर्ष पर पहुचा हू कि फिल्म लाइन मे तो हर्गिज भी नही जाना।'

'कैसी बहकी-बहकी बातें कर रहे हो तुम ! फिल्म लाइन के मुकाबले तो कोई कार्य ही नही, रातोरात लखपती सुनो, जिस व्यक्ति की देखरेख मे व सलाह मे मैं काम करने जा रहा हू, उसका कहना है कि ज्यादा-से-ज्यादा तीन लाख लगेंगे और मिलेंगे पूरे तीस लाख। तो जरा सोचो, है दूसरा ऐसा काम जिसमे लाखों के वारे-न्यारे होते हों ?' मुझे लगा सेठजी इसमे काफी आगे बढ़ा दिये गये है, इसलिए कुछ भी कहना नाकाम योजना होगी।

इसलिए मैं व्यर्थ की खुशी जाहिर करके बोला, 'तो इसका मतलब मिर्च-मसाले बेचने की बजाय अब आप फिल्म निर्माता बन गये हैं।'

'अरे साला, क्या मजाक कर रहे हो। क्या मैं ताराचन्द बड़जात्या नहीं बन सकता ? मेरे निर्देशक का तो यहा तक कहना है कि आपकी फिल्म आने के बाद लोग बड़जात्या और ऋषिकेश मुखर्जी को भूल जायेंगे।' सेठ जी ने यथार्थ रखा तो मैं बोला, 'सच है, इसमें कोई दो राय नहीं है। आपकी इस प्रथम और अंतिम फिल्म के फ्लाप होने पर लोग आपको काठ का उल्लू समझकर रुपया ऐंठने दौड़े चले आयेंगे। तब बड़जात्या भला क्यों याद आयेगा ?'

मैंने जब बेदर्दी से वास्तविकता को उगला तो सेठजी की सांस फूल गयी, 'मुझे यह आशा नहीं थी। मैंने सोचा था तुम्हें यह बात सुनकर प्रसन्नता होगी और मुझे उत्साह मिलेगा लेकिन मुझे क्या पता था कि तुम तो पहले जले-भुने बैठे हो।'

'जलने का प्रश्न नहीं है सेठजी, जिस अभिनेता कम निर्देशक की राय पर आपने यह कदम उठाया है, मालूम है वह कितने निर्माताओं को तबाह कर चुका है ? उससे कहिये यदि कुछ प्रतिभा है तो बंबई के फिल्म उद्योग मे करे कोई हंगामा ?' मैंने कहा।

सेठजी बोले, 'मैं अब किसी बात से निरुत्साहित नहीं होने वाला। मैंने फिल्म बनाने की ठान ली है, बनाकर रहूंगा। फिर पता है, फिल्म कितनी जनोपयोगी व आमजन से जुड़ी हुई है। धार्मिक फिल्म है 'जय जय गोविंद-देव'। प्रदेश के चप्पे-चप्पे से देखने के लिए औरतें उमड पड़ेंगी। पुरुषों की तो कह नही सकता।

'तो फिल्म के हास्य पक्ष के लिए उचित रहेगा कि आप और सेठानी भी फिल्म मे रोल करें।' मैंने कहा।

'वह मुझे क्या बताते हो ? आधे कलाकार तो हम घर के ही हैं। मैं भी होशियार हूं, बाकी चने के भाव आ गये है। सबको पर्दे पर फोटू दिखाने का चाव है।' मैं सेठजी के कला, साहित्य व संस्कृति के प्रति हुए झुकाव पर नतमस्तक हो गया। आंखें उठायीं तो वे जा चुके थे।

ऐसे बचेगी सरकार

सरकार अब कभी भी गिर जाती है और व्यर्थ मे मुख्यमत्री के लिए सिर-दर्द बन जाती है। सबसे बड़ा सिरदर्द तो यही कि मुख्यमत्री को अपना पद खो देना पड़ता है। कई जगह तो देखने को मिलता है कि सरकार खडी भी नही हुई है कि गिर जाती है। मुख्यमत्री और उनका सहयोगी मत्रीमडल कभी कतई नही चाहता कि सरकार गिरे। हा, विधायक जरूर चाहते है—उनमे भी अधिकाश विधायक तो वे होते हैं जिनको मत्रीमडल मे जगह नही मिली होती है। दल-बदल ने धुरंधर मुख्यमंत्रियों को पुख्ता सरकारो की नीव तक को हिला दिया है, फिर छोटे-मोटे मुख्यमत्री की तो भला इसमें बिसात ही क्या है? सरकारें गिर रही हैं, राजनीतिज्ञ सत्ताच्युत होने से दु खी हैं। सरकार अब गिरी कि तब गिरी की चिन्ता से आखिर निजात पायें तो कैसे? इसके लिए कुछ 'फार्मूले' ईजाद कर लिए गये हैं। सरकार सकट मे हो तो इनका बेझिझक इस्तेमाल किया जा सकता है।

यदि सरकार गिर रही है और आपको पता चल गया कि गिर रही है तो तत्काल अपने विधायक-दल की बैठक बुलाकर देखें कि कितने विधायक कम पड़ रहे हैं? जब यह पता चल गया कि पांच विधायक कम पड रहे हैं तो फौरन उन पांचों विधायकों से सम्पर्क करें—जिनके पेट मे मंत्रीपद के लिए चूहे कूद रहे हैं। यदि वे पकड़ मे नही आते हैं तो निर्दलीय विधायकों से तत्काल सम्बन्ध स्थापित करें। ये बेचारे ऐसे होते हैं कि इनकी दया हर गिरती सरकार के प्रति उमड़ पड़ती है और सरकार को गिरने से बचा लेते हैं। इनका मोल-भाव करने मे इतना ध्यान अवश्य रखे कि ये निश्चित अवधि के बाद बिदकते हैं। इसलिए 'कान्ट्रैक्ट' थोड़ी लम्बी अवधि का करें।

आपकी गिरती सरकार बच गयी और आपकी साख भी जम गयी।

सरकार बचाने के उपाय करने के बाद भी सरकार गिर रही है तो गिरने दें। पर आप अपने पद पर बने रहें। आप थोड़ा राज्यपाल महोदय से मिल-मिलाकर जितने दिन तक बाटी सिके सेंकते रहें। भौंकने वाले भौंकते रहें। आपको तो जन-सेवा की ललक जगी हुई है, भला वह सत्ता से दूर जाकर कैसे की जा सकती है ?

गांधी की जय बोलो—उनके उपदेशों का मंत्र जनता पर मारो—पर अपने जीवन में उनका जीवन-चरित भूलकर भी आचरित न करें। यह आचरण ज्योंही आपने किया और आपकी सरकार गिरी समझो।

आप अपने सत्तादल विधायको के अलावा अन्य दलो के विधायको से भी परोक्ष रूप मे अच्छे सम्बन्ध रखें। आड़े वक्त ये लोग आपकी सहायता के लिए नगे पाव भागे चले आयेंगे। इन्हें कुछ लाभ या सुविधाएं देते रहें। जैसे वे चाहें उन आदमियों को नियुक्तियां दे देवें, तबादले करा दें—परमिट अथवा लाइसेंस दिलवा दें। ये लोग इसी पंजीरी से आपके गुणगान करते रहेंगे। आपकी सरकार चिरस्थाई रूप से आगामी चुनाव तक सलामत रहेगी।

अगले चुनाव मे जीतने की आज के जमाने मे कतई उम्मीद न करें और उसी हिसाब से जितना भी हड़प अथवा हजम कर सकें—कर लें, वर्ना आगामी चुनाव के समय आर्थिक परेशानी आ सकती है। हारने पर रोटी के भी लाले पड़ सकते है। इसलिए एक बार सरकार मे रहकर पाच पीढियों के ऐशो-आराम की व्यवस्था को ध्यान मे रखिये। इससे आपके पास अर्थ साधन होंगे। जितने अर्थ साधन ठोस होंगे—सरकार भी आपकी उतनी ही पुख्ता होगी। जब आप पूरी तरह परिपक्व और सम्पन्न हो जाये तब सरकार गिर रही है तो गिरने दें, आप बच निकलें।

कई बार अंतुले-कौतुक-करतब राजनीति मे लम्बे समय तक जिन्दा रखते हैं। कोई भी बड़े नेता के नाम पर कोई बड़ा धन्धे का धन्धा, गबन-घोटाला करके—सत्ता से अलग हो जाओ—तब भी सत्ता में रहने के जैसे ही ऐशोआराम भोग सकते हो। ऐसा करने से राजनीति से अलग और सत्ताहीन होने का दुःख नहीं व्यापता है। थोड़ी सावधानी यही रहे कि जरा

केन्द्र को भी विश्वास मे ले लें—वरना वह आपको चैन की वंशी नही बजाने देगा और कोई जांच आयोग-वायोग का नाटक रचकर फिजूल परेशान किया जायेगा।

राज्य मे कोई-न-कोई ऐसा कार्यक्रम प्रारभ करवा दे जिसमे गरीबी की पीड़ा निहित हो—तो इससे भी समय आसानी से कट जाता है। जैसे दस्यु उन्मूलन अभियान, पिछड़े को पहले, वेघर को घर, जंगल मे मगल, अन्त्‍ दय तथा सबको रोटी, ये ऐसे नारे और आश्वासन है कि जनता का स आपके प्रति विश्वास जग जायेगा तथा उसकी लार टपकने लगेगी। कर आपको कुछ नही है बस सचिवालय से आदेश निकालकर विभागो के निद- शालयो के मार्फत, जिला मुख्यालयों तथा ग्राम पचायत स्तर तक उनके निर्देश भेज देने हैं। सरपच, जिला प्रमुख और जिलाधीश आपकी सरकार की दुकान साधे रहेगे।

कई बार स्थिति उस समय बड़ी विषम हो उठती है जब आपके मत्री- मडल मे कोई अन्य साथी आपकी बराबर की टक्कर का हो। उससे साव- धान तो रहें ही, इसके साथ ही साथ आप केन्द्र से बातचीत करके, उपमुख्य- मत्री का पद सृजित करवाकर उसे वहा 'एडजस्ट' कर दें। इससे उसका 'ईगो' काफी हद तक मर जायेगा और वह खुलकर विरोध करने मे सकोच करेगा।

लम्बे समय तक सत्ताजीवी रहने के लिए यह भी जरूरी है कि आप जन-सम्पर्क अथवा जन आयोजनो मे ज्यादा भाग न लेवे। इससे आपके मुह से अट-सट निकलने तथा भूल-चूक होने का पूरा खतरा रहता है। इसलिए इस तरह की वातो से बचें और यदि नौवत जाने की आ ही गयी है तो मित- भाषी बनकर महान और बुद्धिजीवी होने का भ्रम उत्पन्न करे।

राज्य मे कई बार मजदूरो अथवा कर्मचारियो के आदोलन भड़क उठते है। ये अवसर भी अत्यन्त घातक होते है। आप प्रयास कीजिये उन्हे तत्काल राहत की पजीरी देने का। यदि फिर भी वे लोग काबू मे नही आ रहे हैं तो आप स्वय कर्मचारी अथवा मजदूर नेताओं से कभी वार्ता न करे। एक समिति बना दें तथा उसमे वह व्यक्ति जरूर शामिल कर देवें—जो आपका प्रतिद्वन्द्वी हो, इससे जिन्दाबाद-मुर्दाबाद का जयघोष उसके ही नाम बुलेगा।

आप इस बीच दिल्ली जाते रहो—आते रहो। इस बीच कर्मचारियों से काम पर लौटने की अपील पूरी शालीनता से करते रहो—ताकि कर्मचारियों को लगे कि आपकी रुचि उनकी मांगों में पूर्णतः है फिर भी स्थिति काबू मे नही आ रही है तो दिल्ली तो आप आते-जाते रहते ही हैं, किसी दिन वहां से 'काला-कानून' ले आओ सब लोग दुबक जायेंगे। केन्द्र आपको दाद देगा—क्योंकि इससे उनके कानून की खपत बिक्री और सदुपयोग होता है। आपके ऐसा करने से ही तो केन्द्र की सरकार बनी रह सकेगी।

मेरी आवाज सुनो

जब हम बहरे हैं तब हम क्यों किसी की आवाज सुने जी ? दरअसल 'क्स्सि कुर्सी का' में ऐसा ही होता है जिसमें कोई किसी की नहीं सुनना चाहता। फिर एक बात यह भी तो है इस 'मेरी आवाज सुनो' के उच्चारण में गरीब आदमी की रिरियाहट का स्वर उभरता है जो कतई बर्दाश्त होने लायक नहीं है। गरीब आदमी रिरियाये और हम सुन लें यह कभी भी सम्भव नहीं है। ऐसी हालत में 'मेरी आवाज सुनो' कहने वाले पर 'बैन' अथवा प्रतिबंध लगे तो जरा भी आश्चर्य करने की जरूरत नहीं है। और जब हम सुन नहीं रहे है और आप लगातार कह रहे है कि 'मेरी आवाज सुनो' तो आखिर हारकर हम आप पर कानूनी कार्रवाई कर बोलती बंद करने के सिवा कर भी क्या सकते है ?

खैर मामला जितना सहज है उतना खतरनाक भी है। अभिव्यक्ति को लेकर हम जब-तब लड़ते-झगड़ते रहे हैं, इसलिए इस बार भी हम कब चूकने वाले हैं। हालांकि हम जानते हैं कि 'मेरी आवाज सुनो' सुनने की मनाही जनता के हित में ही की गयी है और यह भली भांति प्रतिपादित भी कर दिया जायेगा। इसलिए मात खाना तो सुनिश्चित है, फिर भी थोड़ा बहुत प्रजातंत्र शरीर की धमनियों में बह रहा है, इसकी इतिश्री और कर लें।

इसी बचे-खुचे प्रजातान्त्रिक भाव ने मुझे उत्तेजित कर दिया और मैं भयातुर-सा अपने मित्र के पास इस विषय पर विचार-विमर्श के लिए पहुंचा। मित्र मुझसे उम्र में बड़े तो हैं ही, इसी के साथ-साथ इन मामलों के बड़े तजुर्बेदार और दूर तक की कहने वाले भी। मित्र ने मेरी मुखमुद्रा देखते ही समझ लिया कि मेरी आवाज को खतरा है। अतः छूटते ही बोले,

'तुम्हारा गला बैठ गया है क्या ?'

मैंने खंखारकर बोलना चाहा, लेकिन फिर भी मैं नही बोल पाया—आखिर इतना ही बोल पाया, 'मेरी आवाज सुनो !'

मेरी यह बात सुनकर वे बोले, 'कुछ बोलोगे तब ही तो सुनूगा । बोलो, डरो मत। यहा कोई तुम्हारी आवाज नही सुन रहा।'

'वह 'मेरी आवाज सुनो' के साथ क्या हो गया है ? आपको तो सब कुछ पता होगा ?' मैंने अबकी बार पूरी ताकत लगाकर आवाज निकाली।

'मुझे सब कुछ पता है बरखुरदार। लेकिन आवाज सुनने की फुरसत किसके पास है और गरज क्या पड़ी है ?'

'लेकिन मित्र यह तो मानते हो, यह खुले आम अभिव्यक्ति पर पाबदी है ?' मैंने कहा।

'इसका मतलब आपको स्वतत्र होने की गलतफहमी अलग है। अरे यार, पाबदियो के सिवा हमारे देश मे और है ही क्या ? फिर आवाज सुनने पर तो पूरी पाबदी है।'

मैं मित्र की पहेलियो से परेशान होकर झुझला गया और अपना आत्म-समर्पण उनके सामने करके बोला, 'ऐसा है मित्र मैं 'मेरी आवाज सुनो' फिल्म की बाबत बात कर रहा हूं जिस पर प्रतिबंध लगाया गया है और लोकसभा मे भी जिसकी चर्चा हुई है। कृपया इस प्रकरण को मुझे विस्तार से समझाओ ?'

'मित्र मेरे, उतावली मत बरतो। मैं तुम्हारी पीडा से भलीभाति परिचित हू। भावुक हो न, इसलिए व्यग्र रहते हो। मैं मूल विषय पर आ ही रहा था कि तुमने अपनी जिज्ञासा खुले शब्दों मे प्रकट कर दी।'

'सही बात है, मैं इस विषय को लेकर कई दिनो से परेशान था। हजारो सिने प्रेमी इसे पर्दे पर अब न देख पायेगे यह सोच-सोचकर पछता रहे हैं। और उनकी जिज्ञासा अब काबू से परे होती जा रही है।' मैंने कहा।

मित्र ने अंतर्कथा बताना शुरू किया, 'ऐसी बात है प्यारे भाई, इस देश मे यानि अपने देश मे अल्पसख्यको के हितो की पूरी सुरक्षा की जाती है। उनकी सुविधाओं का पूरा ध्यान रखा जाता है। 'मेरी आवाज सुनो' मे भी अल्पसंख्यकों के हितो को आंच आई है।'

'नहीं, यह तुम झूठ कह रहे हो, यह फिल्म मैंने देखी है, इसमें कहीं पर भी अल्पसंख्यक वर्ग पर कुठाराघात नहीं किया गया है।' मैं बीच में बोला, तो मित्र हंसा और बोला, 'उत्तेजित होने की आवश्यकता नहीं है। समझ-समझ में फेर है। 'मेरी आवाज सुनो' में हमारे खादीधारी अल्पसंख्यक वर्ग यानि नेता वर्ग पर कुठाराघात किया गया है। ये लोग भी देश में न्यून हैं इसलिए इन्हें भी अल्पसंख्यकों में माना गया है। अब यदि सरकारी प्रतिबंध इस पर लगाया जाता है तो इसमें दोष क्या है ? यानि जो लोग सरकार चलावें उन्हीं पर आप फिल्म बनावें। फिल्म भी ऐसी कि जिसमें आप उन्हीं के जीवन-चरित को उघाड़ें ? आप आम आदमी की स्थिति का बयान कीजिये। हत्या, बलात्कार, अपराध, सैक्स, खुले चुम्बन और प्रेम पर फिल्म बनाइये। स्वतन्त्र होने का मतलब यह तो कतई नहीं है कि आप सरकार की कमजोरियों का पर्दाफाश करें। आप चलाकर आ बैल मुझे मार को चरितार्थ कर रहे हैं। अभी इन्हीं बातों से प्रेरित होकर काला कानून लागू कर दिया गया या इमरजेंसी लगा दी गयी तो फिर आप कहते फिरोगे कि सरकार ने दमन चक्र चला दिया है। आप पहले ही अनुशासन में रहिये। कम-से-कम सरकार के खिलाफ तो कुछ मत बोलिये।'

मित्र जब अपना भाषण रोक ही नहीं पाये तो मैंने जबरन रोका और शंका रखी, 'फिर स्वतन्त्र अभिव्यक्ति का क्या मतलब हुआ ? प्रजातन्त्र में यह कहा जाता है कि सबको बोलने-लिखने, पढ़ने का पूरा अधिकार होता है। तो फिर 'मेरी आवाज सुनो' ने ऐसा क्या अपराध कर दिया ?'

'इसका मतलब इतनी देर तक मैं व्यर्थ में झख मारता रहा। तुम बार-बार अभिव्यक्ति-अभिव्यक्ति रो रहे हो। क्या करोगे इस मरी अभिव्यक्ति को लेकर। जाओ और तान खूंटी सोओ। ज्यादा बोलने की अगर इच्छा हो तो कमरे में कुन्दी लगाकर चिल्लाओ। क्या आपको फिल्म बनाने का और कोई विषय ही नहीं मिला क्या ? सस्ता प्रेम-रोमांस-सैक्स इन सबकी छूट जब सरकार ने दे रखी है तो आपको खद्दरधारियों से भिड़ने की क्या जरूरत पड़ गयी ?' मित्र बोले।

'अब समझा ! अरे फिल्म वाले भी कम नहीं हैं। पहले फिल्म को सैंसर से तो निकलवा लाये और अब थोड़े दिन पर्दे पर दिखाकर 'चीप

पब्लिसिटी' के लिए प्रपंच कर रहे है। वे हिन्दी चलचित्र दर्शकों की मन-स्थिति से परिचित है कि वह इसके वियोग मे तड़पता फिरेगा, इसलिए मजे ले रहे हैं वरना मेरा जैसा आदमी तो फिल्म देखने की इच्छा ही नही रखता है।'

मेरी इस बात से मित्र खुलकर हसे और बोले, 'इसलिए ही तो कह रहा हूं 'मेरी आवाज (मत) सुनो' और चारपाई पर खर्राटे भरो, और सुनो अभिव्यक्ति यानी रैंकने की इच्छा हो तो दरवाजा जरूर बन्द कर लेना, वरना फिर कहोगे मुझे रैंकने नही दिया और मेरी आवाज नही सुनी।' मैं, मित्र से यह रहस्य समझकर घर लौट आया और आकर चारपाई पर सोने का असफल प्रयास करने लगा। मुझे बार-बार अभिव्यक्ति की हूक उठ रही थी, लेकिन डर से मैं रैंक नही पाया। मैंने सोचा फिर नक्कार खाने मे मेरी सुनेगा भी कौन ?

हमारे टाइफाइड हुआ

इस आशय की घोषणा करते हुए हमें अत्यन्त हर्ष है कि एक साल की अल्पावधि मे ही हमें टाइफाइड सुख दो बार प्राप्त हो चुका है। ईश्वर आप सबको इतना सुख छह महीने मे ही प्रदान करे, ईश्वर से मेरा यह हार्दिक निवेदन है।

किन कारणो से इस सुख की उत्पत्ति हमारी काया मे हुई, यह तो हमे कुछ मालूम नहीं। पर हम यह जरूर कह सकते है मलेरिया में लापरवाही बरतने से यह सुख प्राप्त होता है। मलेरिया की दवा देते समय डॉक्टर ने हमे पथ्य-परहेज के सम्बन्ध मे कई प्रकार की हिदायतें दी थी, पर हमने उन पर अमल सिर्फ डॉक्टर को कहने मात्र के लिए किया, अन्यथा हमें यह सुख नसीब न हुआ होता।

हमारे टाइफाइड होने की खबर साहित्य जगत मे ही नहीं अपितु आम आदमी तक भी पहुच गयी थी। यह बात हमे तब ज्ञात हुई जब दो आम आदमी हमसे इस सुख के आनन्द के बारे में पूछने आये।

'आप इस सुख में किसी प्रकार की दवा का सेवन तो नही कर रहे ?'

'बिना दवा के सेवन के इसके आनन्द मे वृद्धि कैसे होगी ?' हमने कहा।

'देखिये चारणजी, यह रोग तो महाराज का रूप है। इसमें दवा लेना तो चलाकर मौत को आमन्त्रित करना है।' हमारे कवि को उनके द्वारा चारण सम्बोधित किया जाना बुरा लगा।

'मौत ! ओह वह कब आयेगी ?' हमने यह उच्चारण पत्नी को सुनाकर कहा।

'हमारा तो कहना यही है—चारणजी, इस महाराज को बिना किसी

व्यवधान के निकलने दो। किसी प्रकार की दवा इसे दबाने की मत करो। हमारे गांवों में तो इसी तरह चलता है।'

हमने मन में कहा, 'तभी तो उन्हें स्वर्ग जल्दी नसीब होता है।' आम आदमी अपना उवाच समाप्त करके चले गये।

इसके दूसरे दिन ही एक आम आदमी फिर हमारे सिरहाने आ धमका। शकल-सूरत से हमने पहचान लिया। हो न हो दर्शनार्थी कोई पुजारी है। हाथ में तांबे का लोटा था। आते ही हमसे बोला, 'टाइफाइड आपको ही है न?'

हमारे हां कहने पर वह बोला, 'देखिये, मुंह खोलिये। टाइफाइड की मुफीद दवा आपके शरीर में पहुंचानी है। यह भोमिया बाबा का चरणामृत है। दो ही खुराक में आराम हराम हो जायेगा।'

हमने मुंह खोल दिया, पुजारीजी ने टाइफाइड की मुफीद दवा मुंह में डाल दी। और जाते-जाते बोले, 'सुनो, शाम को नन्दू ओझा को भेज रहा हूं। झाडा दे जायेगा। उसे दो रुपये मेहनताने के दे देना। मेरा हिसाब बाद में हो जायेगा।'

हमें लगा आम आदमी हमारे घर का झाडा लगाने पर तुल रहा है। आता है चाय पीता है और ऊपर से मेहनताना और मांगता है।

दो-तीन दिन तक हम इस आम आदमी की चतुराई का बोध करते रहे। तभी तीसरे दिन एक फिर तीसरा आम आदमी आ धमका। कुशल क्षेम पूछने के बाद बोला, 'आपने यह क्या कर रखा है। मैंने देखा है आपने सिरहाने न तो कोई तलवार रख रखी है और न ही कोई चाकू।'

'चाकू! चाकू तो हमारे रसोई में पत्नी के हाथों में शोभा बढा रहा है।'

'आप समझिये शर्माजी, इस रोग में ऊपरी हवा और अलाय-बलाय का डर रहता है, अतः अस्त्र-शस्त्र रखना जरूरी है। उनके भय से ऐसी बलाय आपके पास भी नहीं आ सकती।'

हमने कहा, 'अस्त्र-शस्त्र के नाम पर डण्डे से काम नहीं चल सकता क्या?'

हमारी इस टिप्पणी पर वे हंसे और बोले, 'नहीं, जहां काम आवे सुई, कहा करे तलवार।'

'इसका मतलब तो हमारी आलमारी में रखी, कारतूसों से भरी रिवाल्वर भी कारगर नहीं हो सकती ?' हमने पूछा।

'जी नहीं, केवल तलवार और चाकू ही इसके कारगर अस्त्र हैं।' आम आदमी यह अमूल्य परामर्श देकर चला गया।

हमारे बीमार होने का यह सनसनीखेज समाचार साहित्य जगत में तो दावानल की तरह फैल चुका था। इससे प्रभावित होकर एक नवोदित कवि महोदय हमारे पास आये और बोले, 'आदरणीय ! आपके टाइफाइड होने का समाचार मैंने सुना तो मुझे बहुत प्रसन्नता हुई। सोचा इस बहाने आपसे मुलाकात होगी।'

'यह तो मेरा भी अहोभाग्य है। हे साहित्य के नये कपूत। कोई तुम्हें व्यथा हो तो कहो।'

'व्यथा ! सुनो मेरी कथा। मैंने कुछ कविताएं लिखी हैं। सोचा आप बीमार हैं। अवकाश पर तो चल रहे होंगे। समयाभाव होगा नहीं। अतः इन कविताओं में संशोधन कर दो, साहित्य के मठाधीश !' इतना कहकर उसने मेरे सामने बीस पृष्ठों में लिखी कविताओं का पुलन्दा फैला दिया। मेरी आखों के आगे अंधेरा छा गया और मैंने धीरे से पुकारा, 'पानी।'

'पानी ! पानी के स्थान पर मेरी कविताए पीओ, साहित्य के मठाधीश तो मैं जानूं ! मुझे आशा ही नहीं पूरा विश्वास है आपका टाइफाइड जिन दवाओं से ठीक नहीं हुआ, वह मात्र मेरी रचनाओं के काव्य पाठ से मिट जायेगा। मुझे विश्वास है यमराज भी तुम्हें लेने आये और मेरी कविताओं का काव्य प्रलाप तुम करने लगो तो, एक बार वह भी अपने प्राण बचाकर भागने लगेगा। इसलिए या तो तुम स्वयं कविताएं पढ़ो अथवा मुझे पढने दो।' साहित्य का वह नया कपूत मुझे मारने पर तुल रहा था।

हमने कहा, 'हे साहित्य के नये कपूत ! डॉक्टर का कहना है, तुम दवा में तेल, खटाई यहा तक कि जहर भी खा लेना, लेकिन काव्य प्रलाप मत सुनना। उससे तो मैं भी तुम्हें नहीं बचा सकूंगा अतः मुझ पर रहम खा और यह अस्त्र किसी और पर आजमा।'

नया कपूत बोला, 'ठीक, मैं अपनी कविताएं समेटता हूं। पर इस शर्त पर कि तुम मुझे इसी समय बीस रुपये उधार दोगे ?' इतना कहकर उसने

अपनी जहरीली पिटारी समेट ली।

मेरे सामने असमंजस की स्थिति आ खड़ी हुई। इधर खाई उधर कुआ। सोचने पर हल मिला। हमने कहा, 'हे साहित्य के नये कपूत ! तुम यहां से अपनी जान बचाकर निकल भागो। मेरे पास तुम्हारी कविताओं से भी ज्यादा जहरीली पिटारी है। और वह है मेरी अपनी पत्नी, जो इस समय रसोई में रोटियां बेल रही है। जिसके हाथ में बेलन है। उसने जो बीस रुपये की बात सुन ली तो, बस खैर नहीं।' पत्नी का नाम सुनते ही साहित्य का नया कपूत अपनी चप्पलें हमारे यहां छोड़कर भाग लिया।

क्रिकेट ऋतु आयी

हे मेरी प्राण प्यारी सखी ! शरद ऋतु अपने यौवन पर है और स्थान-स्थान पर क्रिकेट खेली जाने लगी है। घर-घर, गांव-गांव, नगर-नगर और गली-गली में मरी क्रिकेट की चर्चा है। जिनके प्रीतम परदेस गये थे—वे, और जो आज तक कार्यालयों में सिर खपा रहे थे, वे, सब छुट्टियां ले-लेकर अपने-अपने घरों को लौट आये है, लेकिन हाय री मेरी तकदीर ! वह दो टकिया की नौकरी से बधा बावरा मेरा प्रीतम इस किरन्टि ऋतु में भी मेरे यहां नहीं आया है। मैंने सोचा था—वे दीवाली या दशहरे पर आ जायेंगे —परन्तु तू स्वयं सोच, दो-दो दीवाली और दो-दो दशहरे निकल गये—लेकिन वे नहीं आये। इसके बाद मैंने यह सोचा था कि यदि इन त्यौहारों पर नहीं तो राष्ट्रीय पर्व क्रिकेट-मैच के मौके पर तो वे दौड़े चले आयेंगे—लेकिन वे तो इस क्रिकेट की परम सुहानी ऋतु में भी घर नहीं आये है। अब तू ही बता, क्या वे फागुन मास में ही मेरे आंगन में आकर नाचेंगे। तू ही बता मैं कैसे धीरज धरू ?

हे सखी ! अब तो रह-रहकर मन यू कहता है कि किसी क्रिकेट बालर के हाथों की गेंद बन जाऊ—जिसे कपिलदेव अपने छक्के से मैदान की बाउण्ड्री वाल से बाहर खदेड दें या गावस्कर का चौका बन जाऊं। जिसे पकड़ने के लिए मैदान के तमाम खिलाड़ी पसीना-पसीना हो जायें। अथवा वह गेंद बन जाऊ, जिससे विकेट की गुल्लियां उखड जायें और वह खेलने वाला खिलाड़ी पेवेलियन में बैठा मुह बिचकाता रहे। अब तो मन में खीझ इतनी समा चुकी है कि मन वैसी गेंद बनने को भी आकुल होने लगा है—जो किसी खिलाड़ी का करम सेंकती हुई अतिरिक्त खिलाड़ी को खेलने का

मौका दिलवाती है।

सखी, देख तो सही, स्थान-स्थान पर क्रिकेट की चर्चा है। रेडियो पर कमेंट्री सुनी जा रही है और जो वे होते तो मैं कदापि चूल्हे-चौके को हाथ नहीं लगाती। बल्कि कमेंट्री सुनती। वे अपने हाथों से जब खाना बनाकर मुझे खिलाते, तो मैं उन्हें झिड़कती और खाना नहीं खाती तथा कपिलदेव के छक्के पर बांसों उछलकर अपने हाथ में घर का वास उठाकर उनसे पूछती, 'अरे क्या खाना बनाया है तुमने। रोटी जल गयी—सब्जी में नमक नहीं है।' लेकिन मैं तो दुर्भाग्यशाली हूं कि यह मौका ही मुझे नहीं मिल पाया है।

प्यारी सखी! तुझसे ईर्ष्या होने लगी है। तू कितनी सौभाग्यशाली है कि तेरे प्रीतम तेरे कपड़े धोकर उनमें नील देकर अलगनी पर सुखाते हैं और तू मुंडेर पर बैठी-बैठी, गुनगुनी धूप का आनंद लेती हुई विश्वनाथ के आऊट होने तथा कपिलदेव की बैटिंग की बाट जोहती है। तेरे जैसे साजन सबको मिलें।

अरी सखी! सामने वाला पड़ोसी मैच देखने का पास तो ले आया है। लेकिन मेरी समस्या का समाधान कैसे हो। ये पांच नन्हें-मुन्ने अकुलाने लगेंगे और मुहल्ले में ओलम्पिक खेलों का-सा वातावरण बना देंगे। यदि आज वे होते तो उन्हें मैं ये पांच प्राणी सौंपकर पड़ोसी के साथ मैच देखने चली जाती। तू उस पड़ोसी से जाकर पूछ—इन बच्चों के जन्मदाता के नहीं लौटने से उसके दिल पर क्या बीत रही है?

सखी! मुझे नहीं लगता कि जो आदमी इस मनभावन परम मनोहारी क्रिकेट ऋतु में ही नहीं आया तो वह मार्च के माह में, जबकि सरकार बजट में नये-नये कर लगायेगी, तब लौट आयेगा। यह कतई असंभव है। करों के बोझ से झुकी कमर को लेकर वह फिर गृहस्थी के भार को सह सकेगा?—यह मेरे जैसे प्रीतम के लिए तो सर्वथा असंभव है। यही सोचकर शायद वे अभी भी नहीं लौटना चाहते हैं। अरी सखी, जो एक बार वे आ जायें तो मैं उन्हें फिर नहीं जाने दूंगी और कहूंगी—यदि वे जाना चाहते हैं तो अपने साथ पांचों बच्चे भी ले जायें ताकि मैं इस क्रिकेट ऋतु का तो आनंद ले लूं।

मेरी सखी ! चुप क्यों है ? बोल तो सही। बड़े देख मोहल्लों में बच्चों ने विकेट गाड़ दिये हैं और महान खिलाड़ी बनने का पूर्वाभ्यास आरम्भ कर दिया है। स्कूल में आजकल उनका मन नहीं लगता। क्रिकेट के बुखार में पीड़ित होकर वे रात में भी 'कैच आउट—कैच आउट' चिल्लाते हैं। इससे रात्रि में इनके माता-पिता जाग उठते हैं और अम्पायर के रूप में विसिल बजाने तथा बच्चों को क्रिकेट के नियम समझाने लगते हैं। ये वे ही तो दिन हैं जब कार्यालय खाली रहते हैं और दफ्तर का बाबू बाहर लान में बैठा आंखों देखा हाल सुनता है। ये ही दिन हैं, जब अफसर अफसर अपने बाबू से इस खेल की तकनीक पूछता है और थोड़ा समझ जाने पर स्कोर भी पूछने लगता है।

सखी ! एक बात हो तो कहूं। लगता है सारा राष्ट्र ही क्रिकेट खेलने में लगा हुआ है। राजनीति की क्रिकेट को देख लो—राज्यों में कोई विकेट गिर रहा है तो कोई एल० बी० डब्ल्यू० होकर बैक टू पेवेलियन हो रहा है। नये-नये खिलाड़ियों को बैटिंग का मौका दिया जा रहा है। उन्हें पता नहीं है कि राजनीति का क्रिकेट कैसे खेला जाता है ? वे गेंद आकाश में उछाल रहे हैं और 'कैच आउट' के शिकार होकर अम्पायर द्वारा पराजित घोषित किये जा रहे हैं।

सखी ! उन खिलाड़ियों की हालत बहुत खस्ता है, जिन्हें टीम में शामिल नहीं किया गया है। वे क्रिकेट कंट्रोल बोर्ड पर आरोप लगाकर विफलताओं का सारा दोष उनके सिर मढ़ रहे हैं। ये लोग या तो खेल देखते नहीं और जो देखते हैं वे बैटिंग करने के [illegible] हैं। उनका मानना है कि उनके अलावा और कोई अच्छा [illegible]। यही हाल मेरे उस भूतपूर्व खिलाड़ी का है, जो इस [illegible] अभाव [illegible] में फाइलों से जूझ रहा होगा या अफसर की डा[illegible]

कर सकती—बालिग ही कर सकती हू और वे मेरी बालिग से सदैव आतंकित रहे है।

सखी ! हो सके तो तू स्वयं उनके शहर जाकर उनसे यह कह कि तुम मुह छिपाते क्यों फिर रहे हो। घरों में जाकर देखो—प्रीतम—किस तरह पत्नी सेवाओं में व्यस्त हो गये हैं। उनसे कहना कि या तो वे लौट चले अन्यथा मैं उनका तबादला इसी शहर मे करवा लूगी। यह सुनते ही वे तेरे चरणों मे लोट पड़ेंगे और तब तू मौका मत चूकना, कहना कि घर भाड़ हो गया है—कुछ दिन की पी० एल० लेकर ठीक-ठाक कर जायें। तेरी यह बात सुनकर वे फिर थर-थर कापने लगेंगे—तब तू उन्हे थोडा धीरज बधाना और कहना कि मैं उनके बिना तडप रही हू।

जब वे तेरे साथ आने को तैयार हो जाये तो उनसे यह मत कहना कि क्रिकेट का मैच देखने का टिकट ले लिया है। सच कहती हू कि यदि उन्हे यह पता चल गया तो वे चलती ट्रेन से कूद जायेगे और कभी नही आयेंगे तथा उनके स्थान पर पहले की तरह मनीआर्डर ही आयेंगे। और हां ! तू लौट आना जरूर आना, ऐसा नही हो कि तू मेरे प्रीतम की सेवा से प्रभावित हो वही डेरा लगा ले। सच, ऐसा किया तो मुझसे बुरा कोई नही होगा। जा उनसे कह कि बावरे, तेरी मधुमती इस क्रिकेट ऋतु मे बावली हुई तुझे पुकार रही है।

ऑनली फार वी० आई० पीज

सब लोग जा रहे थे, सो मैं भी चल दिया परन्तु मुझे वहां तैनात पुलिसमैन ने रोक दिया, 'कहा जा रहे हो ?'

'जाना कहा, वही इक्कीसवी सदी में ।'

'लेकिन तुम अभी नहीं जा सकते, देखते नही कम्प्यूटर साहब क्या कह रहे है ?' पुलिसमैन बोला ।

मैंने सामने देखा—कम्प्यूटर की प्लेट पर अंकित था, 'आप रुकिये, वैचारिक रूप से आप अभी इक्कीसवी सदी में जाने योग्य नहीं हैं ।' मैं बोला, 'लेकिन मैं भौतिक रूप से श्रीसम्पन्न होकर जाना चाहता हूं। इक्कीसवी सदी से वैचारिक रूप से सम्पन्न होने का मतलब क्या है ?' 'देखिये जी, हमारा और अपना वक्त खराब करने से तो कोई लाभ नही। कम्प्यूटर साहब का आदेश फाइनल । जैसा उन्होंने आपके बारे मे कहा हम आदेश मानने को विवश है । कृपया लौट जाइये वरना हमारा एक्सप्लेनेशन काल कर लिया जायेगा', पुलिस वाला बोला ।

मैंने कहा, 'अजीब सिस्टम है, तुम आदमी हो और एक यंत्र के वशीभूत होकर इस तरह आतंकित हो जैसे आपातकाल लग गया हो ।'

'आप समझिये भाई साहब, आप थोड़े दिन बाद आइये, हमे आपके बारे मे यही आदेश देखिये अभी-अभी मिला है, सामने देख लीजिये ।'

इस बार कम्प्यूटर की प्लेट पर लिखा था, 'दो साल बाद आइये और वैचारिक रूप से इस तैयारी के साथ कि आप बीसवीं सदी की कोई हरकत, इक्कीसवी सदी में नही करेंगे तब विचार किया जायेगा ।'

मै बोला, 'देखिये आपका कम्प्यूटर खराब हो सकता है इसलिए कृपया

मुझे जाने दीजिये। मेरे जाने से इक्कीसवी सदी के शिड्यूल मे कोई गडबड़ नही होगी। 'नारा इस समय दिया जा रहा है और प्रवेश दो साल बाद, यह तो खुली अंधेरगर्दी है।'

'मैं आदेश का पालन करने के लिए विवश हूं—कृपया दो साल बाद इसी तारीख को पुन: पधारें, फिलहाल चादर तानकर सोइये। आप दकियानूस बीसवी सदी के पिछड़े इंसान हैं। यहां जाकर फिर गरीबी, राहत देने तथा विकास की मांग करोगे—वैचारिक रूप से पहले आप यह निर्णय कर लीजिये कि आप इक्कीसवी सदी में जाकर पहली बात तो गरीब होते हुए भी गरीब नही मानेंगे, महंगाई का रोना नही रोयेंगे तथा किसी भी शिकायत के लिए सरकार को दोषी नही ठहरायेंगे। देखिये यह सब बातें काफी पुरानी हो गयी हैं—अब तो आपको इन सबके लिए अपना नजरिया बदलना चाहिए।' पुलिस वाले ने इक्कीसवी सदी का गुर समझाया।

'लेकिन मैं तो इसलिए जाने को लालायित था कि वहां गरीबी कतई नहीं होगी, महंगाई से मुक्ति मिल जायेगी तथा जीवन बहुत ही सुखद, ऐश्वर्यपूर्ण होगा परन्तु आप तो कुछ उल्टा ही बता रहे हैं।'

'देखिये उल्टा कुछ नही—सब सीधा है। आपकी सोच ही उल्टी है। हमें अपने सोचने की आदत को बदलना है—फिर कोई परेशानी नही है। सरकार की आधी परेशानियां तो केवल सोच बदलने से ही हल हो जाने वाली हैं। सरकार के साथ और कुछ नही तो सोच के स्तर पर तो सहयोग करना चाहिए', पुलिसमैन ने कहा।

'यही तो हिन्दुस्तान मात खा गया प्यारे भाई! देखिये कम्प्यूटर साब आपके बारे मे अब मुझे क्या आदेश दे रहे हैं?' पुलिस वाले को हड़बड़ाने के लिए मैं बोला—तो वह कम्प्यूटर साब की ओर याचक की तरह देखने लगा। वहां लिखा था, 'इस आदमी से बहस करने से बढ़िया—इसे चले जाने को कहो, यह अभी किसी कीमत पर इक्कीसवी सदी मे नही जा सकता।' यह पढ़कर पुलिसमैन की आंखें लाल हो गयी तथा मुझसे मुखातिब होकर बोला, 'यह आदेश मुझे है तथा कहा गया है कि तुम इसी समय रफूचक्कर हो जाओ। तुम जिद पर अडे हो, मेरी सी० आर० खराब हो गयी तो अभी निलंबित हो जाऊंगा। इसलिए भाई साहब मेरे बच्चो की

खातिर अभी भाग जाओ।'

मैंने जेब से दस रुपये का एक नोट निकाला और कहा, 'क्या इस भ्रष्टाचार का भी आसरा नहीं रहा अब ?'

पुलिसवाले के मुह मे पानी आ गया और वह माथा पकडकर बोला, 'हाय री तकदीर अब भ्रष्टाचार भी नहीं कर सकता, जब से कम्प्यूटर साब की नियुक्ति की गयी है। सारा धंधा चौपट हो गया है। वेतन के सहारे बीसवीं सदी क्या सत्रहवीं सदी के हो गये हैं।'

इस बार प्लेट पर अंकित था, 'तुम देशद्रोही हो, भ्रष्टाचार की जड हो—मैं तुम्हें एक अवसर और देता हूं वरना राबोट पुलिस को आदेश देकर तुम्हें अभी अरेस्ट करवा दूगा, कहा मानो और जाओ।'

मैं फिर पुलिसवाले से बोला, 'यह राबोट क्या है ?'

'राबोट हमारा विकल्प है। हमारे फेल्योर होने पर यह मानव अपराधी और पुलिस दोनो को धर दबोचता है इसलिए आप घर जाकर दो वर्ष के लिए सो जाइये।'

'अगली बार तुम्हारे लिए मैं पूरी कोशिश करूगा, अभी जाओ।'

'लेकिन एक बात और बता दो कि इस समय इक्कीसवी सदी में जा कौन रहा है ?' मैंने पूछा।

'सही तो यह है कि कुछ खास वी० आई० पी० ही जा पा रहे हैं।'

'इसका मतलब यहा भी भेदभाव, आम आदमी के साथ यहा भी दुर्भावना। कैसे आ पायेगा समाजवाद ?'

'अजी गोली मारिये समाजवाद को, उस कमबख्त का नाम भी मत लेना सारा चौपट कर दिया। उसका नाम क्या जाना जनता ने कि स्वय जनता ही सरकार बनने लगेगी। सरकार को बडी परेशानी हुई उस समय इस मरे शब्द के चलन से। अब केवल एक अहसास है यह इक्कीसवी सदी जिसे महसूस करना है और खुश रहना है।' पुलिसवाला बोला।

'इसका मतलब भूखे पेट भजन करने की नयी परम्परा की शुरुआत है नयी सदी।'

'जी, अब आप समझने लगे है थोड़ा-थोडा। ऐसा करो फिलहाल तुम खर्राटे लो वह देखो वी० आई० पीज आ गये है।'

मैंने देखा सामने से सफेद पोशाक में लिपटे चिकने मुस्कराते चार चेहरे दनादन इधर ही आ रहे थे—कम्प्यूटर साब कह रहे थे, 'आइये आपका स्वागत है—कुर्सियां खाली पड़ी हैं बैठ जाइये, ध्यान यह रखिये कि कोई आम आदमी गलती से घुसपैठ न कर ले। आपको कुर्सी पर बैठने का पुश्तैनी हक है।' चारों व्यक्ति इक्कीसवी सदी मे घुस गये और मैं बीसवी मे ही इक्कीसवी के अहसास के प्रयत्नों में सोचता हुआ अपने घर आ गया।

जाग उठा है देश

पता नही, ओलम्पिक शुरू हो गये है, वह देखो अपना टिंकू तो टी० वी० के पास जमा हुआ है ।

मेरी आखें श्रद्धा मे झुक गयी और मैं फुर्ती से उठकर दैनिक क्रिया मे जा जुटा । मकान के सभी लोग हैरान और परेशान थे कि यह अजीब आदमी है। ओलम्पिक चल रहे है, यह वेफिक्री से रोज के कामो मे उलझा है। मुझे चिन्ता बाजार जाकर बच्चो की नई पुस्तकों की तलाश कर खरीदने की थी। मैं पत्नी के पास गया तो वह बोली, 'कहा चले ?'

मैं बोला, 'बाजार और कहा ? पता है पाठ्य-पुस्तकें मिल नही रही। दुकानो पर भीड़ रहती है। नम्बर नही आता।'

'लेकिन आज से ओलम्पिक शुरू हुए है और आप हैं कि ऐसे मौसम मे भी बाजार जा रहे हैं। हमारे साथ टी० वी० नही देखेंगे।'

'सुनो टिंकू की मम्मी। ओलम्पिक देखने की मनाही नही है। लेकिन बाजार में भी ओलम्पिक चल रहे हैं। ऐसे में जब सारा शहर ओलम्पिक देख रहा है। मुझे इस समय दुकान पर जाकर पुस्तकें खरीदकर बाजी मारकर स्वर्ण पदक जीत ही लेना चाहिए। बच्चे स्कूल, बिना कापी-किताब के काफी दिनो से जा रहे हैं। मैंने कहा तो वह जवाब मे बोली, 'अपने अकेले के बच्चे तो जा ही नही रहे हैं। हजारो बच्चे ऐसे हैं। और अब तो पूरे एक महीने स्कूल-कालेजो मे भी पढ़ाई होने से रही। ओलम्पिक देखेंगे कि पढ़ेंगे ?'

'यह सही है कि देश जाग उठा है। परन्तु मेरे लिए यह सुनहरा अवसर है। मैं इसे कदापि नही छोड़ सकता।' यह कहकर मैं नायिका को तड़पता

छोड़कर बाजार को निकल पड़ा। रास्ते में देखा तो सन्नाटा था। अधिकांश लोग घरों में दूरदर्शन के दर्शन कर रहे थे। या फिर सी० एल० और पी० एल० के आवेदन दफ्तरों से छुट्टी के लिए भर रहे थे। बाजार में आया तो बड़ी निराशा हुई कि अभी दुकानें ही नहीं खुली थीं। भटकाव के बाद मालूम पड़ा कि इस समय टी० वी० पर हाकी मैच आए और लोग दुकान खोलकर बैठ जायें अनुचित है।

मन मारकर घर आया तो पत्नी भी उसी मैच के दर्शन में तीन अदद बच्चों के साथ मशगूल थी। मैंने कहा, 'सुनो खाना परोस दो। मुझे बाजार फिर जाना पड़ेगा।'

एक-दो बार तो उसने सुना ही नहीं। बाद में वह बोली, सोचो तो सही, आज तो खाना छोटे-छोटे बच्चों ने नहीं मांगा। आप इत्ते बड़े होकर मांग रहे हैं। खाना बनेगा तभी तो परोसूंगी और खाना बनेगा ठीक मैच के खतम होने के बाद।'

सीने पर सांप लेट गये। जहर का घूंट पीकर ओलम्पिक को तथा टी० वी० की खरीद को कोसने लगा। लोग मेरे फिसड्डीपन पर हंस रहे थे। पडोसी मेरी खाना मांगने की बात को बचकानी और हास्यास्पद मान रहे थे। मैं हीनता-बोध से दब्बू बनकर फिर बाजार को निकल पडा। पान की एक दुकान पर रेडियो से कमेंट्री सुनने वालों की भीड जमा थी। ऊपर से एक महिला खिड़की से सिर निकालकर आवाज लगा रही थी। अरे दीपक, जल्दी आ जाओ, नल चले जायेंगे। नहाओगे-धोओगे कैसे? शायद वह दीपक जरा भी चिन्तित नहीं था। वह बड़बड़ाती हुई खिडकी से गायब हो गयी तथा देश का प्रबुद्ध जागरूक चेतनशील नागरिक फिर कमेंट्री में डूब गया।

मैंने सोचा घर जाने में फायदा क्या है। खाना बनेगा दोपहर बारह बजे। दफ्तर को देर और होगी। एक ठेले वाले के यहां छोले बटूरे खाए और दफ्तर पहुंच गया। लेकिन दफ्तर में अजीब सन्नाटा था। कमरों की दीवारें शोक-सभा करती जान पड़ी। कुर्सी व टेबिलें खाली-खाली अपने चाहने वालों के अभाव में बिलख रही थीं। किसी कमरे से ट्रांजिस्टर की आवाज आई तो वहां गया और देखा आठ-दस जने टेबिल पर

कमेंट्री सुनने में डूबे थे। अफसर अभी तक नहीं आया था। पी० ए० से मालूम हुआ कि अफसर मैच समाप्त होने के डेढ़ घण्टे बाद आयेंगे।

मुझे लगा जैसे सारा देश जाग उठा है और एक मैं ही हूं जो ऐसे में सो गया हूं। इस अन्तर्राष्ट्रीय भाई-चारे के महापर्व पर मैं अचेतनता महसूस करने लगा तथा मुझे अपने आपको 'रूस' बना लेने की कोफ्त हुई। मुझे ओलम्पिक का यह बहिष्कार बड़ा महंगा दिखाई दिया। अपनी सीट पर गया तो मन रुआंसा होकर उखड़ा-उखड़ा-सा लगा। बरामदे में आकर बदन तोड़ने लगा। देश जाग उठा है तो भी दफ्तर में सन्नाटा व गतिहीनता, मैं सीट पर आया और फाइलों से माथा मारने लगा।

खबरों की खबरदारी

ये कल्पनावाणी का पोलखोलपुर केन्द्र है, अब आप आज की ताजा खबरें सुनिये। आज प्रातःकाल मुर्गे के बांग देने के साथ ही साथ सिक्के बद नेता श्री मलूकदास ने पुल के निर्माण अवसर पर कहा कि पतित पावनी गंगा, जल की दृष्टि मे तो पावन और कल्याणकारी है ही, अब इस पुल के निर्माण से और अधिक लोकमंगलकारी हो जायेगी। इस पुल के निर्माण से ठेकेदार का तो कल्याण होगा ही, हम भी उनके कम आभारी नहीं होंगे।

ठेकेदार ने इस अवसर पर पुल का ब्यौरा देते हुए बताया, 'पांच करोड की लागत के बजट वाले इस पुल के निर्माण मे केवल दो करोड़ रुपये ही खर्च में आयेंगे, शेष राशि जनमगलकारी कार्यों में काम आ जायेगी। मैं माननीय मलूकदास का हृदय से आभारी हूं कि जिन्होंने इस पुल का ठेका मुझ नाचीज को दिलवाया और काम की चीज बनाया। मैं ठीक ऐसे ही मौके की तलाश मे था कि उनका जैसा साफ दिल कोई आदमी मुझे मिले। मैं उन्हें विश्वास दिलाता हूं कि मैं यह कार्य पूरी निष्ठा और 'पुख्ता इरादे' के साथ पूरे दो करोड़ रुपये ही खर्च करके पूर्ण करूंगा। सीमेंट का अभाव मेरी कार्यकुशलता पर कोई प्रभाव नहीं डाल सकेगा क्योंकि बड़े काम की चीज है माटी। बड़ी प्यारी चीज है। मेरे देश की माटी सोना उगलती है, मैं धरती का सोना, जो सामने ढेर सारा दिखाई दे रहा है तमाम उसमें मिला दूंगा। माटी का उपयोग कोई मुझसे सीखे। बाढ़ आयेगी तो माटी माटी मे मिल जायेगी। पुल रहेगा न पुलिया। नेताजी मेहरबान और कद्रदान हैं तो दूसरा टेंडर भरूंगा। फिर ठेका मिलेगा और जो भी उनकी सेवा मुझसे बन पड़ेगी तहेदिल से करूंगा।'

दूसरा समाचार—मुख्यमंत्री श्री बटुकदास ने आज अपने लाव-लश्कर के साथ अकाल पीड़ित व सूखा-ग्रस्त क्षेत्रों का दौरा किया, वह एक ऐसे गांव में पहुंचे जहां केवल चार जिन्दा लाशें ही शेष बची थी। मुख्यमंत्री ने उनकी दर्दभरी दास्तान सुनी और ग्लसरीन के चमत्कारी प्रभाव से उनके गोलमोल कपोलों पर अश्रुकण छलक पड़े। उन्होंने तुरंत ही इस परिवार को राहत की पंजीरी बांटने का निर्देश दिया। परिवार के ये चारों सदस्य मंत्री जी की उदारता पर अभिभूत हो उठे तथा उन्हीं के सामने पंजीरी फाकने लगे। हमारे संवाददाता के अनुसार दूरदर्शी मुख्यमंत्री को अविलंब आभास हो गया कि ये तो सारी पंजीरी चाट जायेंगे और उन्हें दूसरी किश्त चुकानी पड़ेगी, अतएव वे तुरत ही कार में बैठकर वहां से रफूचक्कर हो गये।

इसके बाद मुख्यमंत्री ने दूसरे गांव में राहत बांटी। वहां कुल 20 अदद इन्सान शेष थे। राजधानी लौटकर सायंकाल मुख्यमंत्री ने पत्रकारों को जानकारी दी कि आज उन्होंने लगभग 50 ग्रामों का तूफानी दौरा किया तथा पांच हजार लोगों को राहत बांटी। इस पर कुल एक लाख रुपये व्यय होने का अनुमान है। पत्रकारों ने बाद में मुख्यमंत्री द्वारा दी गयी दावत का लुत्फ उठाया और मुख्यमंत्री जी का सरकारी प्रेस नोट अपने अखबारों में छापने के लिए ले गये।

तीसरा समाचार—गृहमंत्री श्री दंगादमन सिंह ने आज पूर्वी प्रदेश में दंगा पीड़ित क्षेत्रों का दौरा कर दंगा पीड़ितों को आश्वस्त किया कि दंगाई जल्दी ही पकड़ लिए जायेंगे, और उन्हें किसी भी कीमत पर माफ नहीं किया जायेगा और आपने यह भी कहा कि हमें दंगा नहीं करना चाहिए क्योंकि दंगों से कटुता बढ़ती है और अकाल मृत्यु भी हो जाती है। अतएव बात बतंगड़ बनाने की एवज या तो दंगाई कल तक मेरी कोठी पर सम्पर्क करके मामले को रफा-दफा करवायें अन्यथा उन्हें फिर अंत में गिरफ्तार कर ही लिया जायेगा।

इसके बाद मुख्यमंत्री ने घड़ियाली आंसू बहाते हुए दंगा पीड़ितों की पीड़ा सुनते हुए उनके साथ अपनी अनेक मुद्राओं में फोटुएं खिंचवायीं। यह भी जानकारी मिली है कि इसी दिन शाम को मुख्यमंत्री ने भी अपने बयानों के बण्डल में से एक बंडल फेंकते हुए घोषणा की है कि डाकू स्वयमेव आत्म-

समर्पण कर दें अन्यथा राज्य की तमाम पुलिस बटालियनें दस्यु विरोधी मुहिम में होम कर दी जायेंगी। हमारे संवाददाता के अनुसार मुख्यमंत्री दगाइयों तथा डाकुओं में यह अंतर नहीं कर पाये कि उन्हें अपने आगे-पीछे इस समय डाकू ही डाकू दिखायी देते हैं अतएव उन्होंने दस्यु उन्मूलन बयानों के पुलिन्दे में से एक बयान प्रेस को झटपट जारी करवा दिया। चौथा समाचार—अभी-अभी समाचार मिला है कि आज सायं एक 'देश रक्षक' के साहबजादे ने झुग्गी-झोंपड़ी कालोनी में एक मासूम बालिका को अपनी वासना का शिकार बना लिया। बालिका के चीखने-चिल्लाने पर वहां भीड़ इकट्ठी हो गयी तथा उतनी ही तत्परता से पुलिस भी वहां जा पहुंची। पुलिस ने साहबजादे को भीड़ के हमले से सौ फीसदी बचा लिया है। पुलिस की इस कार्यवाही पर राजनीतिक क्षेत्रों में भारी प्रसन्नता व्यक्त की जा रही है। जानकारी यह भी मिली है कि संबंधित पुलिस कर्मी को अविलम्ब एक 'प्रमोशन' दिया जायेगा। लड़की को अस्पताल ले जाकर डॉक्टरी मुआयना करवाया जिसमें डॉक्टर ने लड़की का शील सही सलामत पाया है। डॉक्टर को भी पदोन्नति के अवसर देने की बात चर्चाओं में है। लड़की अस्पताल से रोती हुई भागी और एक कुए में कूदकर उसने बाद में आत्महत्या कर ली।

और अंत में—विलंब से मिले एक समाचार के अनुसार विपक्षी दलों का यह आरोप गलत पाया गया है—जिसमें अंधेरपुर ग्राम में 13 व्यक्तियों को जिन्दा जलाने की बात की गयी थी। राज्य के जिम्मेदार मंत्री ने स्वयं तीन दिन तक इस गांव का दौरा किया तथा कोई भी लाश मिलने से इन्कार कर दिया। उन्होंने कहा कि जो तीन लाशें मिली हैं वे डाकुओं की है। बाकी जनता में से कोई नहीं मरा है। गांव वाले इस कृत्य पर बड़े प्रसन्न हैं तथा वे पुलिस के हृदय से शुक्रगुजार हैं। अब आज की खबरें समाप्त हुईं।

जोग लिखी गांव से

गरीबी मिटाने की बातें फिर सिर उठा रही हैं। सच कहा गरीबी *मिटाने की बातें करते ही मेरी आंखो मे गरीब मिटने का मानचित्र पता* नही क्यों घूमने लगता है ? आशंका होती है, गरीबी नही, गरीब मिट जायेगा। सवाल गरीबी मिटाने का नही, चिन्ता यह है कि गरीब मिट गया तो इस देश की मौलिकता समाप्त हो जायेगी। और प्रजातंत्र को खतरा उत्पन्न हो जायेगा। इसलिए आपसे विनम्र अनुरोध है कि आप दिल्ली मे रह रहे है। दिल्ली गरीब देश की राजधानी है। दिल्ली मे ही गरीबी मिटाने के कानून-कायदे तैयार हो रहे है, इसलिए थोड़ा ध्यान रखना कि सरकार गरीबी का सपूर्ण उन्मूलन नही कर दे।

पिछले दिनो गांव से लंगोटिया यार रामभरोसे का पत्र आया है। उसने लिखा है—गांव मे, सब ज्यो-का-त्यो है। किसी प्रकार की चिंता मत करना। सुगनी काकी अपने पचास बरस पहले खरीदे हुए पुश्तैनी चरखे से आजीविका चला रही है और रामधन अपने कच्चे कुएं से ही डेढ बीघा खेत को जोतकर अपनी गृहस्थी की गाडी खेंच रहा है। एक समाचार यह है कि रामधन की बडी बेटी विधवा हो गयी है और अब वह रामधन के यही आकर रहने लगी है। शेष दो बेटिया भी जवान हो गयी हैं रामधन और उसकी पत्नी इसी चिंता में रात-दिन घुलते रहते है।

रामभरोसे ने गाव से एक समाचार और भेजा है। वह यह कि गाव के मुकुन्द बिहारी की जो इकलौती बेटी शहर में ब्याही थी, उसे ससुराल वालो ने दहेज के लालच मे जलाकर मार दिया है। मामला आत्महत्या का बनाया जा रहा है। उस दिन मुकुन्द बिहारी अत्यंत खुश थे कि उनकी बेटी

को शहर वाले व्याह ले जा रहे हैं। उन्हे पता नही था कि शिक्षा का स्वरूप इतना विकृत विकराल हो गया है। मुकुन्द बिहारी के पास पैसा नही है इसलिए पुलिस उसकी कोई भी मदद करने मे असमर्थ बताई जाती है।

सच बात यह है, मेरे पास आपको लिखने को अपना कोई समाचार नही है। मै तो रामभरोसे की चिट्ठी के ही समाचार आपको लिख रहा हू। रामभरोसे ने यह भी लिखा कि जिस आशा से हरिया ने अपने लडके को पढ़ाया था, उसके सारे सपने चूर-चूर हो गये है। लडका एम० ए० तो पास कर आया है, लेकिन अब उसे नौकरी नही मिल रही है। और न वह घर का पुश्तैनी कामकाज कर पाता है। इसलिए लडका घर का रहा न घाट का। हरिया को उसको पढाने का बहुत दुख हो रहा है। लगता है उसकी गरीबी दूर नहीं होगी। उलटे वह शहर मे लडके को पढाने के चक्कर मे और बरबाद हो गया है। पत्नी के गहने भी गिरवी रख चुका है।

गाव के मेहतर ठाकुरो की करतूतो से दुखी है। ठाकुर लोग उन्हे चाहे जब पीट देते है। अथवा गाली-गलौच करते है। कुओ से न तो पानी लेने देते है और न ही मदिरो के बाहर से ही दर्शन करने देते हैं। गाव का सरपच भी एकदम चुगद निकल गया है। शहर जाकर आता है और कहता है कि अब गरीबो के लिए नई योजनाए लाया हू---गरीबी मिट जायेगी। सच, वह इस बीच बहुत चालाक हो गया है। उसके दोनो बच्चे डॉक्टरी पढ रहे है और खेतो पर बिजली का पपसेट दन्ना रहा है। अच्छी खेती उसी की है। अच्छा बीज व खाद भी ग्राम सेवक उसी को दे रहे है। उसने अपना शानदार दुमजिला पक्का मकान बनवा लिया है और कहता फिरता है कि यह अन्त्योदय का कमाल है कि गाव का कायाकल्प हो रहा है। यही हाल गाव के एकमात्र महाजन का है। सबका शोषण करके उसने गांव के लोगो की चीज वस्तुए गिरवी रखकर डकार ली है तथा गरीब लोग उसके बधुआ मजदूर बनने को अभी तक भी बाध्य है।

रामभरोसे का पत्र पढकर बहुत दुखी है मन। अरबो रुपए की पचवर्षीय योजनाए भी फलीभूत नही हो रही है। और चद लोग सरकारी पजीरी फांक रहे है। सरकार बनाने की तथा बाद मे कुर्सियां मजबूत करने की फिकर रह गयी है देश के राजनेताओ को। आप लौटती डाक से मुझे

लिखो कि क्या ऐसा ही होता रहेगा या किंचित सुधार की आशा भी है ताकि मैं रामभरोसे को पत्र लिखकर आश्वस्त कर सकूं। रामभरोसे के पत्र का अंतिम भाग आपको बताऊं, उससे पहले थोड़ा रामभरोसे के बारे में भी बता दूं। हालांकि उसने अपने समाचारों के नाम पर केवल 'कुशलपूर्वक' लिखा है। लेकिन मैं जानता हूं कि उसकी स्वयं की हालत क्या है?

रामभरोसे मेरे साथ पांचवी कक्षा तक पढ़ा मेरा सहपाठी है। शुरू से ही उसकी रुचि जनसेवा की ओर रही है। महापुरुषों के जीवन प्रसंग उसने खूब पढ़े-सुने हैं। इसलिए वह अपना पूरा जीवन महापुरुषों की तरह ही बिताने को दृढ़ संकल्पित है।

वह छद्म और छलावों की राजनीति से कोसों दूर है और यही कारण है कि वह गंदे खद्दर के कुरते-पाजामे में लिपटा जवानी में ही बूढ़ा हो गया है। गांव के लुच्चे-लफंगे हर बार सरपंच के लिए चुन लिए जाते हैं लेकिन उसे अवसर नहीं दिया जाता।

खैर छोड़ो इस बात को, रामभरोसे के पत्र के शेष भाग को और जान लो। रामभरोसे ने लिखा है—अभी गत दिनों गांव में अपने चुनाव जीतने के तीन साल बाद क्षेत्र के एम० पी० साहब आये थे। वे कह गये हैं कि सब्र का फल मीठा होता है। अगली बार चुनाव जीत गये तो गांव को बिजली से चमका देंगे। और स्कूल को क्रमोन्नत करवा देंगे। सारा गांव इस बात के लिए तैयार हो गया है। सरपंच पूरी सभा में जिन्दाबाद-जिन्दाबाद चिल्लाता रहा। इसलिए गांव की जनता ने भी उसका पूरा अनुसरण किया है। सभा में हुआ क्या कि गांव के जीवण के लड़के बुद्धा ने एम० पी० साहब के कलफदार कुरते को हाथ से छूकर देख लिया—जिससे एम० पी० साहब बिदक पड़े और चमचों ने बुद्धा को खामख्वाह पीट दिया। मुझे दुख तो बहुत हुआ लेकिन क्या करता, जहर का घूंट पीकर रह गया। गांव में लोग जितने महंगाई से दुखी नहीं हैं जितने कदम-कदम पर होने वाले अपमान से क्षुब्ध हैं। गरीब को न्याय और सम्मान कब मिलेगा? गांव के लोगों को गंवार, मूर्ख तथा बेवकूफ समझकर आचरण हो रहा है, इसके लिए सरकार क्या कर रही है, जानकारी मिले तो लिखना। इसमें झूठ तनिक भी नहीं है, कभी फुरसत मिले तो यहां आना, सब कुछ देख लेना।

मतदाता के नाम

मेरे प्रिय मतदाता, जरा नयन खोलो, तुम्हारे सामने तुम्हारे क्षेत्र के भावी विधायक महोदय दोनों हाथ बांधे, नतमस्तक होकर याचक की मुद्रा में खड़े हैं। जानते हो यह मात्र तुम्हारा फिजूल का सिर्फ एक वोट चाहते हैं। आज भरपूर नजर से इन्हें निरख लो अन्यथा पूरे पांच वर्ष तक यह मुद्रा और यह मूरत फिर देखने को नहीं मिलेगी। सच, तुम कितने सौभाग्यशाली हो जो भगवान स्वयं भक्त के यहां पधारे हैं। माग लो जो कुछ मागना है आज ये सब कुछ देंगे। गाव में बिजली माग लो नल माग लो कन्या पाठशाला खुलवा लो परीक्षा का केन्द्र माग लो और अपने बेरोजगार बेटे के लिए नौकरी मांग लो, तुम्हारी जैसी इच्छा हो वही मांगो, आज मिल जायेगा, और कुछ नही तो आश्वासन ही मिल जायेगा। आश्वासन भी बहुत होता है। जीत गये तो सबसे पहले तुम्हारा ही काम होगा। हो सकता है जीतने के बाद महामहिम तुम्हें पहचानें नहीं। आश्वासन की याद दिलाना हो सकता है इन्हें तुम्हारी सुध हो आये और ये तुम्हारे सकटमोचक बन जाये।

जानता हू तुम्हारे मन में इस समय कौन से भाव आ रहे हैं यही न सब धोखा करते हैं, काम कोई नहीं करता। लेकिन तुम्हें विश्वास होना चाहिए कि ये काम करने के लिए दृढ़ संकल्प है क्योंकि इनके चुनाव घोषणा पत्र में केवल काम की ही बातें लिखी गयी हैं। भाई लिखित मे दे रखा है अब तो विश्वास करो। फिर जनसेवक होता ही किसलिए है? जनता की सेवा करना उसका प्रथम कर्तव्य है तो तुम यह क्यों सोच रहे हो कि वे अपने कर्तव्य से डिग जायेंगे। ऐसा कभी नहीं हो सकता।

तुम यह सोच रहे होगे कि ये बार-बार दल बदलते हैं। तो मैं इस बारे

मे भी स्पष्ट बता दू कि दल भी इन्होंने आपके हित के लिए ही बदला था और यदि आगे भी ऐसी नौबत आयी तो ये केवल तुम्हारे लिए ही वर्तमान दल का त्याग करेंगे। यह तो तुम स्वय जानते हो कि मन्त्री बने बिना जनता की सेवा हो ही नही सकती और मन्त्री पद के लिए अदला-बदली जरूरी है। इसलिए दल-बदल को चारित्रिक दोष बताकर इन्हे वोट न देना तो तुम्हारी भारी भूल है।

रहा काम का सवाल, काम भी ये लोग कम नही करते। भाई-भतीजों को नौकरी इनके भरोसे मिली है, गाव के ठेकेदार को पुल का ठेका इनकी बदौलत मिला है। बेटा कलेक्टर अपनी योग्यता से हो ही नही सकता था। यदि ये दल-बदलकर मन्त्री नही बने होते तो। अत. काम न करने का तुम्हारा आरोप मिथ्या और निराधार है। अब यह बात अलग है कि तुम किसी मन्त्री के सगे-सबधी या कुटुबीजन नही हो। भाई वोट तो तुम्हें देना है ही फिर इन श्रीमानजी को ही क्यों न दान किया जाय। इससे जहा तुम दानी कहलाओगे वहीं विधायक जी तुम्हारे इस बोझ से कभी उऋण नही होगें। इसलिए हठ छोड और मतदान के लिए तैयार हो।

मुझे मालूम है, कई अन्य प्रत्याशी तुम्हे लोभ देकर ठगना चाह रहे हैं। कोई तुम्हे सर्दी से ठिठुरता देख कम्बल लेकर आया है तो कोई तनिक गर्माहट के लिए मदिरा की बोतल दिखा रहा है, यह तो सरासर तुम्हारा अपमान है तुम्हे ऐसे वोट कदापि नही देना है। जाति, धर्म, भाषा तथा वर्ग के आधार पर भी मतदान अनुचित है इसलिए वोट तो ऐसा दान है जो केवल सामने खड़े इस वर्तमान शालीन व्यक्ति को ही दिया जा सकता है।

मैं क्या बताऊं, यह तो तुम स्वय भी जानते हो कि घोषणा-पत्र मे गरीबी का समूल उन्मूलन करने की इन्होने ठान रखी है। ये एक बार विधायक बन चुके हैं अपनी गरीबी मिटा चुके हैं। अब तुम्हारा ही नबर है। नबर तो पहले भी तुम्हारा हो सकता था लेकिन आजकल चुनाव अवधि निश्चित नही रही, कभी भी हो जाते हैं। इसीलिए पहले जन-सेवक जी अपनी गरीबी नही मिटायें तो अगले चुनाव मे तुम्हें मुह दिखाने लायक नही रहेंगे। इसलिए वे इस स्थिति मे पहले आ जाने की कोशिश करते हैं ताकि तुमसे आगे भी सपर्क बनाये रखा जा सके। अबकी बार भी चुनावों

में उम्मीदवार हजारों की संख्या में हैं। सबको अपनी गरीबी मिटाने की फिकर है। धीरे-धीरे तुम्हारी गरीबी इसी तरह मिट जायेगी।

तुम्हारे दिमाग में बार-बार यह बात आ रही होगी कि ये सज्जन तो कुछ बोल नहीं रहे और मैं क्यों इनकी वकालत कर रहा हूं, तो स्पष्ट कहूं भाई, मैंने इस क्षेत्र के वोट दिलवाने का ठेका लिया है, दरअसल मैं वोटों की दलाली का काम करता हूं इससे भी गरीबी मिटती है। इनकी या तुम्हारी गरीबी तो पता नहीं कब मिटेगी लेकिन इनकी ही तरह अपनी गरीबी सबसे पहले मिटानी है। इसलिए मैं तुमसे आग्रह करता हूं कि तुम चुपचाप अपना वोट इन सज्जन को ही देना। इसलिए मेरे परम प्रिय वोटर, मेरी लाज रख लें अन्यथा आगामी चुनाव में मुझे यह ठेका नहीं मिलेगा और मेरे बाल-बच्चे भूखे मर जायेंगे, मैं तुम्हें साष्टांग प्रणाम कर सात बार तुम्हारे आगे नाक रगड़ता हूं कि मेरी इस नाक का अस्तित्व खतरे में न पड़ जाय। इस बार तो तुम्हें मेरी और मेरे समर्थित प्रत्याशी की लाज रखनी ही होगी। इसी विश्वास के साथ तुम्हारी ही तरह—एक अकिंचन बिचौलिया।

मैंने फिर पूछा।

'सीखना किससे गरीब, पापी पेट ने सब करतब सिखा दिये। देखो जितना ऊपर सफेद हूं, भीतर से उससे कहीं ज्यादा काला हूं।'

'लेकिन इस सबकी जरूरत क्या है? क्या केवल जनसेवा के व्रत से काम नहीं चल सकता?' मैंने कहा।

'जनसेवा का धंधा ही तो मेरा मुख्य व्यवसाय है। इस धंधे में अब पांचों उंगलियां घी में हैं। परेशान क्यों होते हो। जनसेवा प्रेरित होकर ही तो मैं तुम गरीब के घर में खिला हूं इस बार। गरीब की सेवा ही मेरा मूल लक्ष्य है। मानते हो मेरा प्रताप कि तुम अच्छे बजट की खबर से कितने खुश नजर आ रहे हो। पता चलेगा तब जब तुम बाजार जाओगे।'

'क्या मतलब?'

'मतलब यही है कि फागुन तुम्हारे साथ चोट कर गया। पीले-पीले फूल खिले। फसलें पकने लगीं, पाले ने या असामयिक अतिवृष्टि ने सब कुछ चौपट कर दिया तो भला फागुन करे भी क्या? और सुनो फागुन भी चार दिन का ही होता है। हर अच्छी चीज सिवाय गरीबी के, केवल चांदनी की तरह चार दिन ही टिक पाती है। इसलिए राहत का बजट भी चार दिन का ही है। फिर तो सभी वह होने वाला है, जिसके लिए हम लोग प्रयत्नशील हैं।' फागुन ने स्थिति बताई और मैं फिर बोला, 'सुनो कुछ भी हो मैं तुम्हारी इस प्रवृत्ति से खुश हूं। मुझे बताओ चुनाव कब होने वाले हैं।'

'चुनाव, चुनाव जब तुम संकेत दे दोगे, तभी हो जायेंगे। तुम्हारी मंशा की अनदेखी नहीं होगी गरीब। चुनाव तुम्हारी अपनी मनपसंद सरकार बनाने के लिए ही किये जाते हैं। अच्छा तो यह रहे कि तुम ही चुनाव की मांग करो।'

'मुझे यह मांग कैसे रखनी चाहिए?'

'सीधी सी बात है, राहत का बजट आया हुआ है। कह दो अब चुनाव जल्दी होने चाहिए। जो सरकार अच्छा बजट दे सकती है, उसे चुनाव का माहौल भी जल्दी ही अच्छी तरह बना लेना चाहिए।'

फागुन की इस बात पर मैं बार-बार नमन करने लगा तथा अच्छे बजट की प्रतिक्रिया स्वरूप उसका हाथ पकड़ मुहर लगाने का स्थान ढूंढने लगा।

आवश्यकता है पतियों की

भारतीय विवाह सेवा आयोग विवाह हेतु पतियों से आवेदन-पत्र आमंत्रित करता है। हमारे यहां सिर्फ अभी पतियों के 75 स्थान रिक्त है। वे ही पति आवेदन करें, जो परीक्षा के लिए चाही गयी योग्यताएं पूरी करते हों। प्रत्येक प्रत्याशी को लिखित परीक्षा मे बैठना होगा। लिखित परीक्षा में उत्तीर्ण प्रत्याशी उनके इन्टरव्यू लेटर में लिखी लड़की के सामने इन्टरव्यू देगा। भारतीय विवाह सेवा आयोग उन्ही का चयन करने को बाध्य होगा, जो मौखिक इन्टरव्यू में उत्तीर्ण होगे।

आवेदन-पत्र निम्नांकित पते से 5 रुपये का धनादेश भेजकर मंगवाये जा सकते है। आजीवन ब्रह्मचारी, सचिव, भारतीय विवाह सेवा आयोग, रण्डुवा भवन, निराशा नगर (दुखी प्रदेश)।

उक्त 75 रिक्त पदो मे से 5 अनुसूचित जाति, 5 अनुसूचित जन-जाति, 5 लंगड़े-लूले फौजी पतियो के लिए सुरक्षित है। 30 वर्ष से कम उम्र वाले प्रत्याशी आवेदन न करें। अनुसूचित जाति, जनजाति व फौजियो के लिए उम्र मे पाच वर्ष की छूट है। विवाह के तजुर्बेदार व्यक्तियों को वरीयता दी जावेगी। समलन, रण्डुवे व तलाक शुदा पुरुषों के चयन के ज्यादा अवसर हैं। कुंवारे व्यक्तियों से प्राप्त आवेदन पत्रों पर तभी विचार संभव होगा, जब उनके साथ कम-से-कम पांच पडोसियो के इस प्रकार के प्रमाण-पत्र संलग्न हो कि वे विवाह बिना बहुत दुःखी हैं और हमारी बहन-बेटियों को बुरी नजर मे देखते हैं।

शैक्षणिक दृष्टि से प्रत्याशी पति ज्यादा-से-ज्यादा 8वीं कक्षा पास हों इससे अधिक योग्यता वाले पतियों के आवेदन पत्रों पर विशेष परिस्थितियो

मे ही विचार सभव होगा।

आवेदनकर्ता पति की मासिक आय कम-से-कम तीन अंको में होना जरूरी है। यानि 100 रुपये तो होना जरूरी है ही। प्रत्येक पति को अपनी मासिक आय प्राप्त होते ही हमारे यहा से प्राप्त पत्नी को सौंपनी होगी। फिर आगे पान, सुपारी व रिक्शा भाड़े के पैसे भी रोज पत्नी से मांगने होंगे।

प्रत्याशी पति को आवेदन पत्र के साथ एक ऐसा बाण्ड फार्म भी लगाना जरूरी होगा कि वह बिना पत्नी की आज्ञा के कभी सिनेमा, होटल व पार्क नही जावेगा। अपने कपडे आप स्वय धोयेगा। सब्जी व बाजार का सामान लायेगा। भविष्य मे होने वाले बच्चो को खिलायेगा, झाड़ू लगायेगा, पानी भरेगा, दूध की लाइन मे लगेगा, जोर से नही बोलेगा, यहां तक कि कम बोलेगा, पत्नी की जली-कटी सुनेगा, बैड टी बनायेगा आदि आदि। खाना हमारे यहा से प्राप्त पत्नी ही पकायेगी। क्योंकि उसे पुरुषो के हाथ से बनी सब्जिया कतई पसन्द नही हैं। साथ ही पति, पत्नी के एक छोटे भाई को तब तक रखने को बाध्य होगा जब तक कि वह पढ-लिखकर तैयार नही हो जाता। उक्त शर्तें पूरी न होने पर पत्नी द्वारा तलाक दिया जा सकता है।

प्रत्येक आवेदन पत्र के साथ पति को 101 रुपये का पोस्टल आर्डर लगाना जरूरी है। अन्य सेवाओं की तरह भारतीय विवाह सेवा आयोग में भी रिश्वत देने की सुविधा है। किसी अधिकृत व्यक्ति को दी गयी रिश्वत ही मान्य होगी। इस सम्बन्ध मे विस्तृत जानकारी हमारे विभागीय एजेन्ट्स से प्राप्त करे, जो हमारे विभाग के सामने पान खाये घूमते रहते है। जैक के रूप मे एम० एल० ए०, एम० पी० व मंत्रियो के फोन मान्य नही होंगे। केवल मुख्यमत्री द्वारा किया गया फोन ही विचाराधीन होगा। आवेदन करने की अतिम तिथि बाद मे घोषित कर दी जावेगी।

परम मनोहर ग्रीष्म ऋतु आयी

अरी प्राण प्यारी सखी ! बाहर बरामदे में आकर देख, गर्म लू के कारण मोहल्ले में कर्फ्यू लग गया है। आदमी नाम का जीव अपने कमरों में कैद अपनी प्रियतमाओं से डांट-फटकार सुनकर अपना जीवन कृतार्थ कर रहा है। बच्चे भी इस समय अपने माता-पिता की शरण में चले गये है और वे उन्हें तंग कर रहे हैं।

अरी सखी, यह वही ऋतु है, जिसमें पडोसी के पखे के नीचे सोने एवं उनके फ्रिज का ठंडा पानी मांगकर पीने में आनन्द आता है। तू भी नजर फैला और इस कार्य के लिए तेरा कौन-सा पडोसी उपयुक्त रहेगा। सखी, मकान मालिक बिजली का भारी बिल देखकर इस ऋतु में मौसम के साथ-साथ गरमाता है और नासपीटे किरायेदारो को कोसता है।

सखी, ये दिन सायंकाल पार्क या बाग में जाकर गोलगप्पे व आइसक्रीम खाने के है। अपने बावरे प्रीतम से कह—उठ, और चल बाग में, वहां मेला लगा हुआ है। फटाफट आंखों से गीड पोंछ और रोनी सूरत पर स्मित हास्य रेखा लाकर बाग में बरबाद हो। यह ऋतु कोई बार-बार थोड़े ही आती है, इसलिए चूल्हे-चौके का चक्कर त्यागकर बाग में ही इडलीडोसा खाकर अपनी भूख शांत कर। इस गर्मी में रसोई में रुकना संभव नहीं है। मौसम की आग के साथ सिगडी की आग में तेरा रूप कुम्हला जायेगा। इसलिए प्रीतम से कह दे कि इस मनोहारी ऋतु में तेरे द्वारा घर पर खाना बनाना संभव नहीं है।

यही समय है सखी ! जब तू अपने मन की चाही इच्छाओं की पूर्ति कर सकती है। वह देख पड़ोसी के फ्रिज आ गया है, तू भी चेष्टा कर तेरा बालम

भी कहीं-न-कहीं से ऋण प्राप्त कर फ्रिज ले आयेगा। रोज कुल्फी जमा और खा तथा सबको खिला। इससे मोहल्ले में तेरे नाम का डंका बजने लगेगा। खूब पंखा चला—नहीं तो पसीने से तेरे रूप को खतरा है।

निगोड़ी सखी ! यह वही ऋतु है, जिसमें बार-बार शृंगार करना पड़ता है—फिर भी तू सही फ्रीज में नहीं रह पाती। उठ चोखः के भाव सौन्दर्य प्रसाधन मंगवाकर अपने हैण्ड बैग में रख और बस में, रास्ते में, जहां भी मौका लगे अपने आपको सवार, गर्म हवा व उमस तेरे रूप की वैरन बनी हुई है, इसलिए उससे टक्कर लेने के लिए बाजार से सौन्दर्य प्रसाधन पर्याप्त मात्रा में लेकर इनका भाव बढ़वा दे।

सखी, यह गर्मी की ऋतु ऐसी है जिसमें तू प्रीतम से रोज कोई-न-कोई फरमाइश कर उसकी नाक में दम कर सकती है। इसी मौसम में तू पति को परेशान कर सकती है। यह मौका निकल गया तो फिर तुझे पूरे एक वर्ष तक पछताना पड़ेगा। ऐसा कर तेरे बहन-भाइयों को पत्र लिख दे कि वे गर्मियों की छुट्टियों में तेरे यहां आ जायें, फिर देखना तेरे बालम का हाल। बार-बार उसे मूर्च्छा आयेगी और तेरे पांव पकड़कर पूछेगा कि उसने आखिर ऐसा कौन-सा पाप किया है—जिसका दंड उसे भुगतना पड़ रहा है। सुन, भाई-बहनों को तू इस समय नहीं बुला पाई तो फिर कब बुलायेगी ? क्या तूने ब्याह इसीलिए रचाया था कि वे तेरे यहां आने को तरसते रहें ? नहीं, वे तेरे भाई-बहन हैं, उनका लाड-प्यार करना तेरा फर्ज है।

सुन, घर में एडवांस बर्फ व अच्छा शरबत रख, घबराहट होने पर शरबत पी और पति को चाय पिला, ताकि आगे सर्दियों में बार-बार चाय को कहना भूल जाये। अपनी सखियों के साथ घूम, सैर-सपाटा कर, यह मौसम की मांग है। हो सके तो घर की माली हालत की परवाह किये बिना पहाड़ जाने का प्रोग्राम बना और पति का जीवन संकट में डाल। तेरी यही उम्र है—जब तू पति पर रौब जमा सकती है। अभी नहीं तो क्या बुढ़ापे में परेशान करेगी ? उठ शादी के बाद की बरबादी का चक्र चला, क्योंकि यहां-वहां सब जगह परम मनोहर ग्रीष्म ऋतु आयी हुई है। मन में उत्साह पैदा कर, सारी समस्याएं स्वतः हल होने लगेंगी। अच्छी साड़ियां खरीद, क्योंकि अभी तेरे बालम ने ग्रेन एडवांस भी ले लिया है।

श्वेत श्याम लक्ष्मी संवाद

जिस समय लक्ष्मी सेठ किरोड़ीमल के यहां पहुंची, पूजा-पाठ धूमधाम से चल रहा था। लक्ष्मी हैरान रह गयी कि उनके पहुंचने से पूर्व ही पूजन चल रहा है। भीतर जाकर देखा तो और भी हैरान हुई कि उनके बैठने के स्थान पर एक अन्य वैभव सम्पन्न युवती बैठी हुई है। लक्ष्मी को बहुत पीड़ा हुई कि अध्यात्म में भी डुप्लीकेट प्रथा प्रारम्भ हो गया है। दुख तो यह भी हुआ कि आदमी असली-नकली की पहचान भी भूल गया है। लक्ष्मी पूजाघर के किवाड़ों के पास खड़ी रहीं, वे जानती थी कि यदि अभी किरोड़ीमल की वस्तुस्थिति समझाने की चेष्टा की तो उनकी बात पर वह विश्वास करने वाला नहीं है। व्यर्थ में अपमानित होना पड़ेगा। अतः वे किरोड़ीमल के परिवार के वहां से हटने की प्रतीक्षा करने लगीं।

पूजा-पाठ के बाद किरोड़ीमल परिवार सहित शीश नवाकर कमरे से बाहर हुआ। लक्ष्मी को अपनी दुर्दशा पर उस क्षण बड़ा रोना आया. जब वहां कोई नहीं रहा तब उनके स्थान पर बैठी उस डुप्लीकेट लक्ष्मी से दो-दो हाथ करने की दृष्टि से उनके पास पहुंचीं।

'ए औरत तुम कौन हो?' लक्ष्मी ने पूछा।

उत्तर देने की एवज खिलखिलाकर हंसने लगी वह औरत। इस बीच उस औरत ने अपने आभूषणों की एक गहरी आभा लक्ष्मी पर डाली—जिसमें लक्ष्मीजी की आंखें चुंधिया गयीं। जब वह हंसती ही रही तो लक्ष्मी ने फिर कहा, 'तुम बेवकूफ लगती हो। बताती क्यों नहीं कि तुमने यह जाली धंधा करने की हिमाकत कैसे की?'

वह औरत फिर मुस्कुराई और बोली, 'मुझे नहीं जानती तुम

तुम्हारी छोटी बहिन।'

'मेरी छोटी बहिन, मेरे कोई बहिन नही है। बनाओ मत औरत, असली-असली बात बता दो, वरना अभी तुम्हारा भण्डाफोड करती हूं।' लक्ष्मी गुस्से में बोली।

'यही तो तुम भूल रही हो बहिन। आजकल तुम्हारी एक बहिन और भी है।'

'क्या नाम है उसका ?'

'उसका नाम काली लक्ष्मी है, सफेद लक्ष्मी बहिन। मैं दरअसल काली लक्ष्मी हूं।'

'लक्ष्मी, लक्ष्मी होती है उसमें काला सफेद क्या होता है ?' लक्ष्मी ने पूछा।

'यही तो मात खा गयी बहिन और यही वजह है कि लोग तुम्हें भूलकर काली लक्ष्मी की पूजा करने लगे है। तुम मेहनत, लगन, ईमानदारी तथा निष्ठा से प्राप्त होनी हो जबकि मुझे प्राप्त करने के लिए यह सब बेहूदी चीजें नही चाहिए। झूठ, व्यभिचार, भ्रष्टाचार तथा फरेब के आसरे मे मिल जाती हू मैं। बस यही कारण समझो कि तुम्हें लोग भूलने लगे है।' काली लक्ष्मी बोली।

'यह तो सरासर अन्याय है। मेरा इसमे अपराध क्या है, जो मुझे इस तरह बेइज्जत किया जा रहा है ?'

'दोष तुम्हारा नही बहिन, मेरा है। लेकिन मैं भी क्या करू ? मेरा काम मैं कर रही हू, तुम्हारा काम तुम। अब भला यह बताओ कि आदमी को लक्ष्मी जिस सरलता से प्राप्त होगी, वही रास्ता तो अपनाएगा। तुम्हारे वाला रास्ता भला कौन अपनाना चाहेगा', काली लक्ष्मी ने बात का मर्म समझाना चाहा।

'लेकिन यह सेठ किरोड़ीमल मेरी कृपा से ही तो करोडपति बन पाया है। फिर इसे तुम्हारे पूजन की जरूरत क्यो महसूस हो गयी ?'

'बिल्कुल गलत। किरोडीमल मेरे महत्व को समझता है, इसीलिए तो वह करोडपति बन सका है।' काली लक्ष्मी ने मुस्कुराकर कहा।

'तुम कहना क्या चाहती हो ? मेरी समझ मे तुम्हारी बात बिल्कुल नही

आ रही है ?' लक्ष्मी सकपकाकर बोली।

'मामला बिल्कुल साफ है। सेठ किरोड़ी नवर दो का धंधा करता है। जिसमें टैक्सों की चोरी, जमाखोरी तथा रिश्वतखोरी का खेल चलता है। वह मनमाने भावों से चीजें बेचता है तथा लक्ष्मी अर्जन करता है। यह अर्जित लक्ष्मी ही काली लक्ष्मी कहलाती है। क्या इस तरह के साधनों से अर्जित की गयी लक्ष्मी को तुम अपनी प्रतिभा का फल मानती हो।' काली लक्ष्मी ने पूछा।

सफेद लक्ष्मी निरुत्तर हो गयी।

काली लक्ष्मी फिर बोली—'चाहे सरकारी कर्मचारी हो या अधिकारी, मंत्री हो या मुख्यमंत्री सब भ्रष्टाचार में पांचों अंगुलियां जमाये धन कमा रहे हैं। गबन-घोटाले तथा रिश्वत के जरिये धनपति बन रहे हैं। ऐसे में तुम ही बताओ वह तुम्हें पूजेगा या मुझे।'

सफेद लक्ष्मी का मन अदर-ही-अदर बैठ गया। वह सारे हथियार डालकर परास्त होकर बोली—'लेकिन मुझे अब क्या करना चाहिए बहिन। मैं बेआबरू होकर आखिर जाऊं कहां ? क्या तुम अब अपना यह सब आडंबर समेटकर अन्यत्र कहीं नहीं जा सकती हो, बहिन मेरे ऊपर कृपा करो और तुम यहां से चली जाओ। कुछ स्थान तो मेरे भी छोड़ दो। मैं बहुत दुखी हूं बहिन, मुझे कोई रास्ता तो बताओ।'

'बहिन तुम खुद समझदार हो, मैं अब कहां जा सकती हूं ? ऐसा कौनसा घर है—जहां मैं किसी न किसी रूप में विद्यमान नहीं हूं। जाना तो तुम्हें ही पड़ेगा। मुझे भला जाने कौन देगा ? सेठ किरोड़ीमल की व्यवस्था ही देख लो—उसने ऐसे-ऐसे इन्तजाम कर लिए हैं कि मैं चाहते हुए भी जा नहीं सकती। कोई छापा मारने आता है तो उसे रिश्वत देता है चाहे वह रसद विभाग का अधिकारी हो या आयकर विभाग का।'

'तो फिर मुझे क्या करना चाहिए ?'

'तुम्हें मृत्युलोक की तरफ से अभी कुछ वर्षों के लिए मुंह मोड़ लेना चाहिए। आदमी बहुत ही घृणित व स्वार्थी हो गया है। जाओ और स्वर्गलोक में आराम करो। मृत्युलोक में आदमी बेहद भागम-भागी और आपाधापी में उलझा हुआ है। इसलिए अपनी इज्जत बचाना अपने हाथ में है। अच्छा

होगा यदि इसी क्षण पृथ्वी को छोड़ दो। बहिन अपनी दुर्दशा तथा कृत्य पर क्षोभ तो मुझे भी बहुत है। परन्तु पापियों के जाल में उलझकर कुल्टा हो गयी हूं। अपना भला चाहती हो तो यहां से भाग जाओ सफेद लक्ष्मी बहिन', काली लक्ष्मी कातर स्वर में बोली।

लक्ष्मी भारी कदमों से बाहर जाते हुए काली लक्ष्मी से बोली—'बहिन तुम जीती, मैं हारी। और सुनो बड़ी मैं नहीं, तुम हो।' यह कहकर लक्ष्मीजी पृथ्वी से रवाना हो गयी।

कैशियर साहिब

ाहसील के कैशियर साहब रहते थे, अपने राम भी उसी
ा। हालांकि हम और वे एक ही मकान मे रहते थे फिर भी
ा बीच कोई अच्छा-खासा याराना नही हो पाया था। तह-
होने के कारण उन्होंने उस छोटे से कस्बे मे अपनी अच्छी-
बना ली थी। इस रेपुटेशन से उन्होंने कुछ गलत लाभ
ासमें कि उनको काफी हद तक सफलता भी मिली।
ई जी ! कैशियर साहब जब शुरू-शुरू मे वहा आये, तो
हां से जो भी सामान क्रय करते उसका भुगतान वे समय
इससे उन्होंने दुकानदारो के हृदय को जीत लिया। पर
होनो बाद उन्होने एक अजब खेल खेलना शुरू कर दिया।
ायर साहब दुकानदारो के यहां से सामान क्रय करते रहे
नाम न लेते।
ानसे पैसे इसलिए नही मांगते थे, क्योंकि पहली बात तो
हसील मे कैशियर थे, दूसरी बात यह थी कि वे शुरू मे ही
दल जीत चुके थे ? तीसरी बात यह थी कि वे यह कहकर
ालते आ रहे थे कि उनका इन दिनों वेतन नही मिल रहा।
ामोश थे।

फिर उसी अवधि के बीच उन्होंने अपना तबादला उस कस्बे से कई सौ मील दूर पाकिस्तान की सीमा पर स्थित एक कस्बे में करवा लिया। इसकी खबर जब दुकानदारों को लगी तो वे अपना शिष्टमण्डल लेकर कैशियर साहब के पास पहुंचे।

कैशियर साहब बड़ी कैफियत से बोले, 'हां मेरा तबादला अवश्य हो गया था, पर मैंने उसे कैंसिल करवा लिया है। मुझे आपसे और इस कस्बे से इतना प्यार हो गया है कि मैं इसे छोड़ नहीं सकता।' इन जादू भरे वाक्यों को सुनकर शिष्टमण्डल निहाल हो गया। और तभी शिष्टमण्डल के लिए चाय के गरमा-गरम प्याले आ गये और दुकानदारों की पैसे मांगने की इच्छा चाय की भाप के साथ हवा हो गयी।

चाय पीकर वे कृत्य-कृत्य हो गये। उन्हें लगा उन्होंने चाय नहीं कोई अमृत का प्याला पी लिया है। और फिर वे सब लौट आये।

उस शिष्टमण्डल के जाने के बाद कैशियर साहब सोचने को मजबूर हो गये। वह सोचने लगे कि तबादले की बात का इन लोगों को पता चल गया है, अब इनको गुमराह कैसे किया जाये। फिर एकदम उनके दिमाग में एक उपाय आ गया और वे खुशी से उछल पड़े और धीरे से बुदबुदाये, जब लोग रिश्वत में खून ही पचा डालते हैं तो क्या वे छोटी-सी बात भी न पचा सकेंगे। अतः फिर उन्होंने अपने सारे स्टाफ को प्रीतिभोज की सुन्दर रिश्वत दे डाली। और सबको सचेत कर दिया। फिर क्या था बोलती बन्द हो गयी। कस्बे के दुकानदारों का कुल मिलाकर करीबन तीन हजार रुपया देना था, पर वह नहीं देना चाहते थे।

एक दिन कैशियर साहब ने अपना सामान बंध कर लिया। सामान क्या था एक पोटी और बैडिंग। बीवी-बच्चे तो वह शुरू में ही साथ नहीं रखते थे। शायद इसी लाभ की वजह से। जब उन्होंने सामान बंध कर लिया तो हमें शंका हुई कि शायद कैशियर साहब जाने के मूड में हैं।

शाम को दूध वाला आया, हमने कहा, 'भाई सामान बंध चुका है कुछ लेना हो तो ले लो।' पर वह अत्यन्त बड़ विश्वास करने वाला था। उसने बोला, 'कैशियर साहब के पैसे कहां जा सकते हैं।'

जिस रात वह जाने की तैयारी में थे हमारी नींद हराम थी।

ताक में थे कि कब यह मूर्ख करवट लाये और वह पार बोलें। हम लिहाफ से मुंह ढाके पड़े थे।

हमारे मन में यह संघर्ष छिड़ा हुआ था। क्यों नही उन्हें अभी पकड़वा दिया जाये। ये बेचारे दुकानदार पहले ही टटपूंजिये है। और यह कम्बख्त उनके पसीने की कमाई को बिना किसी चूरण-चटनी की सहायता के हजम करने जा रहा है। इस प्रकार हमारे मन मे उन गरीब दुकानदारों के प्रति सहानुभूति का सैलाब उमड़ा पड रहा था। इसी प्रकार हम सोचते रहे, पर कर कुछ नही सके, तभी पीपे के बजने की आवाज आई और हमारा दिल जोरों से धड़क उठा। जैसे हमारे सामने मौत खड़ी है और उसे देखकर हम कांपे जा रहे हो, हमने लिहाफ उठाकर देखा'''कैशियर साहब हाथ में पीपी लटकाये, कंधे पर बैडिंग टिकाये गलियारे से होकर गांव के बाहर होकर जा रही सड़क पर जल्दी-जल्दी पैर उठा रहे थे। हमारे सब्र की सीमा टूट गयी और हम उनका पीछा करने लगे।

पता नही कुत्ते भी कम्बख्त उस रात कहा मर गये थे। हालांकि हमने किसी की चोरी नही की थी पर हमारा भी दिल जोरों से धड़क रहा था। उन्हें हमारे आने का भान हुआ ही नही था।

करीबन दो मील जाकर एक चौराहा आता है, वहां आकर कुए से पानी खींचकर उन्होंने अपने गले की खुश्की को दूर किया, तब हमने तीर फेंका, 'कैशियर साहब चल दिये क्या ?'

इतना सुनना था कि उनके हाथों के तोते उड़ गये। होंठों पर जीभ फेरते हुए मेरी ओर घूरकर बोले, 'आइये आइये शर्माजी आइये'''।'

'आइये, आइये क्या उन गरीब दुकानदारों का भी ख्याल है, वह राधे दूध वाला आ रहा है।'

इतना सुनते ही वह बेहोश होने को हुए और अपनी कमर से खिसकती पेंट को ऊपर चढ़ाते हुए बोले, 'सच कहिये शर्माजी, क्या वह आ रहा है ?'

'आ तो नही रहा पर आ अवश्य जायेगा।' हमने उन्हें खतरे से आगाह कर दिया, 'ऐसा न कीजिये शर्माजी ! अरे जरा शर्माजी देखियेगा यह जो नोट है जाली तो नही है।'

जेब से एक सौ रुपये का नोट निकालकर मेरे हाथों में थमा दिया। नोट

फिर उसी अवधि के बीच उन्होंने अपना तबादला उस कस्बे से कई सौ मील दूर पाकिस्तान की सीमा पर स्थित एक कस्बे में करवा लिया। इसकी खबर जब दुकानदारों को लगी तो वे अपना शिष्टमण्डल लेकर कैशियर साहब के पास पहुंचे।

कैशियर साहब बड़ी कैफियत से बोले, 'हां मेरा तबादला अवश्य हो गया था, पर मैंने उसे कैंसिल करवा लिया है। मुझे आपसे और इस कस्बे से इतना प्यार हो गया है कि मैं इसे छोड़ नहीं सकता।' इन जादू भरे वाक्यों को सुनकर शिष्टमण्डल निहाल हो गया। और तभी शिष्टमण्डल के लिए चाय के गरमा-गरम प्याले आ गये और दुकानदारों की पैसे मांगने की इच्छा चाय की भाप के साथ हवा हो गयी।

चाय पीकर वे कृत्य-कृत्य हो गये। उन्हें लगा उन्होंने चाय नहीं कोई अमृत का प्याला पी लिया है। और फिर वे सब लौट आये।

उस शिष्टमण्डल के जाने के बाद कैशियर साहब सोचने को मजबूर हो गये। वह सोचने लगे कि तबादले की बात का इन लोगों को पता चल गया है, अब इनको गुमराह कैसे किया जाये। फिर एकदम उनके दिमाग में एक उपाय आ गया और वे खुशी से उछल पड़े और धीरे से बुदबुदाये, जब लोग रिश्वत में मस्त हो चला करते हैं तो क्या वे छोटी-सी बात भी न पचा सकेंगे। अतः फिर उन्होंने अपने सारे स्टाफ को प्रीतिभोज की सुन्दर रिश्वत दे डाली। और सबको सचेत कर दिया। फिर क्या था बोलती बन्द हो गयी। कस्बे के दुकानदारों का कुल मिलाकर करीबन तीन हजार रुपया देना था, पर वह नहीं देना चाहते थे।

एक दिन कैशियर साहब ने अपना सामान पैक कर लिया। सामान क्या था एक पेटी और बैडिंग। बीवी-बच्चे तो वह शुरू से ही साथ नहीं रखते थे। शायद इसी बात की खातिर। जब उन्होंने सामान पैक कर लिया तो [illegible] हुई कि शायद कैशियर साहब जाने के मूड में हैं।

स्टाफ को कुछ बातें [illegible], पूछने लगा, 'क्या आपका तबादला [illegible] है कुछ ऐसा ही लगे है तो?' पर वह [illegible] बात [illegible] चाहता था। [illegible] बोला, 'कैशियर साहब के [illegible] कहां जा सकते हैं।'

जिस रात वह जाने की तैयारी में थे [illegible] इन्तजाम था। वह इस

रंग खिलाये राशिफल ने

राशिफल देखने का शौक हमे शुरू से ही था। पत्रिका या पत्र हाथ मे आया नही कि राशिफल वाला पृष्ठ पढ़ने लगते थे। महीना या सप्ताह बढ़िया हुआ तो हम उसे खेल जाते थे लेकिन कुछ चैलेंजपूर्ण बातें लिख दी गयी होती तो हम पूरे माह या सप्ताह बेचैन रहते थे। इसी बेचैनी ने हमें राशिफल के अंधकार से उजाले की ओर धकेला और हमने कुछ घटनायें अध्ययन करने के बाद राशिफल का पृष्ठ देखना तत्काल बन्द कर दिया। आज भी पत्र-पत्रिकाओं के राशिफल वाले पृष्ठ हमारे लिए तरसते होंगे।

पहली घटना तब घटी, जब हमें कही बाहर जाना था और हमे उस दिन की तलाश थी, जो यात्रा में सफलता बताता हो। वह सप्ताह भी आ गया जब एक पत्रिका ने हमारे लिए यात्राएं शुभ और सफल तथा मान-प्रतिष्ठा में वृद्धिदायक बताई थी। रेलवे स्टेशन पर आये तो अथाह जन-समूह उमड़ रहा था। टिकिट मिलना मुश्किल था। हमने सोचा, कौन टिकिट ले इस भीड़ मे, एक डिब्बे के शौचालय में जा घुसे। क्योंकि हमें यह तो मालूम था कि यात्रा शुभ व सफल होगी। ट्रेन चल दी और हम यात्रा की सुखानुभूतियो मे खो गये।

एक घण्टे बाद एक काले कोटधारी ने हमारी सुखद कल्पना यह कहकर तोड़ डाली 'टिकिट'।

सुनते ही हमारा कलेजा मुंह को आ गया, पर फिर भी हम राशिफल से आश्वस्त थे। अत: सफाई के रूप मे बोले, 'ऐसा है साहब, स्टेशन पर भीड थी। अत: टिकिट नहीं ले सके। कृपया अब बना दीजिये।'

पर वह शायद यमराज के रूप मे ही हमारे लिए आया था। छूटते

देखते ही मेरे मुह मे पानी आ गया और मैं औपचारिकतावश बोला, 'नहीं जाली तो नही है। रखिये।' मै अब तक काफी ठण्डा हो चुका था।

'आप रखियें भी शर्माजी, बच्चो को मिठाई आदि दे देना।' इतना कहकर उन्होंने नोट जबरन हमारी जेब मे ठूम दिया। हमारे मन मे जो दुकानदारों के प्रति दया उमड़ रही थी, वह हवा हो गयी। हमारा सारा जोश ठडा पड गया।

तभी एक ट्रक आता दिखाई दिया, अब हमारा कुछ दायित्व बन गया था। अतः हमने ट्रक रुकवाया और कैशियर साहब को उसमे बिठा दिया। उन्हे सी आफ देकर हम तो आकर अपने कमरे में सो गये।

सुबह कस्बे भर मे शोर हो गया, कैशियर साहब भाग गये। लोगो ने अपने सिर पीट लिये।

हालाकि अब भी उन दुकानदारो का शिष्टमडल उस गांव मे जाना चाहता है पर इस कस्बे से कई सौ मील दूर होने की वजह से आ नही पाते है।

रंग खिलाये राशिफल ने

राशिफल देखने का शौक हमें शुरू से ही था। पत्रिका या पत्र हाथ में आया नहीं कि राशिफल वाला पृष्ठ पढ़ने लगते थे। महीना या सप्ताह बढ़िया हुआ तो हम उसे खेल जाते थे लेकिन कुछ चैलेंजपूर्ण बातें लिख दी गयी होती तो हम पूरे माह या सप्ताह बेचैन रहते थे। इसी बेचैनी ने हमें राशिफल के अंधकार से उजाले की ओर धकेला और हमने कुछ घटनायें अध्ययन करने के बाद राशिफल का पृष्ठ देखना तत्काल बन्द कर दिया। आज भी पत्र-पत्रिकाओं के राशिफल वाले पृष्ठ हमारे लिए तरसते होंगे।

पहली घटना तब घटी, जब हमें कहीं बाहर जाना था और हमें उस दिन की तलाश थी, जो यात्रा में सफलता बताता हो। वह सप्ताह भी आ गया जब एक पत्रिका ने हमारे लिए यात्राएं शुभ और सफल तथा मान-प्रतिष्ठा में वृद्धिदायक बताई थीं। रेलवे स्टेशन पर आये तो अथाह जन-समूह उमड़ रहा था। टिकिट मिलना मुश्किल था। हमने सोचा, कौन टिकिट ले इस भीड़ में, एक डिब्बे के शौचालय में जा घुसे। क्योंकि हमें यह तो मालूम था कि यात्रा शुभ व सफल होगी। ट्रेन चल दी और हम यात्रा की सुखानुभूतियों में खो गये।

एक घण्टे बाद एक काले कोटधारी ने हमारी सुखद कल्पना यह कहकर तोड़ डाली 'टिकिट'।

सुनते ही हमारा कलेजा मुंह को आ गया, पर फिर भी हम राशिफल से आश्वस्त थे। अतः सफाई के रूप में बोले, 'ऐसा है साहब, स्टेशन पर भीड थी। अतः टिकिट नहीं ले सके। कृपया अब बना दीजिये।'

पर वह शायद यमराज के रूप में ही हमारे लिए आया था। छूटते

ही बोला, गाड़ी दिल्ली से चली है, और अब मालूम है अहमदाबाद आने वाला है। दिल्ली से अहमदाबाद का डबल किराया निकालिये।'

हमारे होश उड़ गये। हाय राम इत्ता पैसा तो जेब मे है भी नही। हमारी अनुनय-विनय का उस यमराज के बेटे पर कतई असर नही हुआ। वह हमे अगले स्टेशन पर उतारकर पुलिस स्टेशन ले गया।

पुलिस स्टेशन अध्यक्ष के मुंह से 500 रुपये जुर्माने के रूप में जमा कराने की सुनकर तो हमारी हालत पतली हो गयी। हे भगवान, अब क्या होगा। पैसा भी जेब मे नही था। इतना जरूर सन्तोष था कि उस शहर मे एक रिश्तेदार रह रहे थे। पर उनके पास पैसा मागने जाने का मतलब मान प्रतिष्ठा को धक्का पहुंचाना। वे भी क्या सोचेंगे—इतने बड़े होकर बिना टिकिट यात्रा करते है। जब पुलिस अध्यक्ष किसी भी तरह नहीं माना तो हमने अपने रिश्तेदार के यहां वही से फोन किया।

बेचारे रिश्तेदार महाशय दौड़े-दौड़े आये। सारा किस्सा हमने उनसे बयान किया तो उनके मुह की भी हवाइया उड़ने लगी। अपनी विवशता जाहिर करते हुए बोले, 'क्या बतायें महीने के अंतिम दिन चल रहे हैं। दो सौ रुपये से ज्यादा का इन्तजाम नही हो सकेगा।'

हमने कहा, 'ठीक है सौ रुपये हमारे पास हैं। बाकी के लिए हमारी गले की चेन किसी के यहा रखकर व्यवस्था करो।'

वे हमारी चेन लेकर चले गये, कुछ ही देर बाद वे व्यवस्था करके लौट आये। 500 रुपये जुर्माने की राशि भरकर हमने जान छुड़ाई। जिन्दगी मे पहली बार यह सब हुआ था। अतः मन आत्म-ग्लानि से बुरी तरह झुलस रहा था। यात्रा न तो शुभ व सफल हुई और न ही मान प्रतिष्ठा मे वृद्धि हुई।

इसी तरह एक मासिक पत्रिका मे हमारी राशिफल मे लिखा कि सन्तान सुख और शुभ समाचारों से प्रसन्नता होगी। उस महीने में देखिये छोटे बच्चे को टाइफाइड हो गया और दफ्तर से हमे अफसर की नाराजगी के कारण मीमो मिला।

एक राशिफल ने हमारे दाम्पत्य सुख की घोषणा की तो पूरे सप्ताह पत्नी से अनबन रही।

त्रासदी शोक-सभाओं की

सौभाग्य कहिये या दुर्भाग्य मेरे ऑफिस की शोक सभाएं करवाने की जिम्मेदारी मेरी ही है। सौभाग्य तो इसलिए कि उस दिन लोगों के बराबर टेलीफोन मृतक के बारे में जानकारी और शोक सभा के नियत समय के सम्बन्ध मे आते है। कुछ लोग व्यक्तिगत रूप से आकर भी सम्पर्क करते है। जिन लोगों के पास मैं पहले कभी किसी कार्य के सम्बन्ध मे गया था, उस दिन वे नही पहचान पाये थे—शोक सभा के दिन वे मुझे पूर्व परिचित की तरह पहचानने लगते है। अधिकाश पूछताछ करने वाले व्यक्तियो की रुचि इस बात मे होती है कि छुट्टी कितने बजे होने वाली है। दुर्भाग्य इसलिए कह सकता हूं कि दफ्तर मे नाना प्रकार के काम है। क्या सिर्फ मेरे लिए यही काम बचा था?

शोक सभा वाले दिन जिन लोगों को सुबह ही ज्ञात हो जाता है कि आज किसी अनुभाग मे किसी व्यक्ति की मृत्यु हो गयी है, वे लोग सुबह से ही शोकाकुल हो जाते हैं। उनका मन दफ्तर के काम-काज मे बिलकुल नही लग पाता और आघाता जाता है। कई बार तो वे अपने दफ्तर में अपनी सीट पर बैठे-बैठे ही पेडलो पर पैर मारने लगते हैं। शोक-विह्वल दिलों की स्थिति व्यक्त करते हैं। हर एक मिनट बाद अपनी रिस्टवाच देखने लगते है।

वैसे मुझे इस कार्य मे कोई दिक्कत नही है। शोक-सन्देश का प्रारूप टाइप कराकर केवल ऑफिस के बास तक भेजना होता है—जिसे वह शोक सभा मे पढ़ता है। दो मिनट के मौन के पश्चात लोग मृतक की शवयात्रा की बजाय अपने घरो की ओर लपक लेते हैं।

शोक सन्देश का प्रारूप बना-बनाया मेरी टेबिल की दराज मे पड़ा है। सिर्फ उसे ही टाइप करना पड़ता है। केवल प्रारूप में नाम और पद ही बदलने पड़ते है बाकी उसकी निष्ठा-मेहनत और लगन ज्यो की त्यो बनी रहती है। अकर्मण्य व्यक्ति भी यदि दिवगत हो जाता है तो यही शब्द मृत्यु के बाद उसका अभिनन्दन करते हैं। वैसे हमारे यहा आदमी का मूल्यांकन मृत्यु के बाद ही होता है।

हालांकि मेरे पास बस यही एक काम है, जिसे भी करने मे मुझे बहुत जोर आता है। बराबर आशका बनी रहती है कि कहीं कोई ऐसी दुर्घटना घटित न हो जाए, जिससे मुझे शोक सन्देश की तैयारी करनी पड़े।

अनेक बार ऐसा होता है जब कोई दिवगत नही हो पाता तब भी लोगों के टेलीफोन आते है अथवा वे स्वय आते हैं और पूछते है, 'और साहब, कोई नयी बात !' उनका 'नयी बात' से आशय शोक विह्वल होने को मन कुलबुलाने लगता है और वे मुझसे शोकातुर होने के लिए जानकारी चाहते हैं।

कई बार ऐसे भी अवसर आये हैं जब मैंने लगातार पांच-पाच दिनों तक शोक सभायें करवाई हैं। मेरा सारा दफ्तर प्रसन्न था और एक मैं था जो शोक सन्देश तैयार करने और भिजवाने की व्यवस्था से ग्रस्त था।

जिस अवधि में शोक सभायें नही हो पाती है तब उन लोगो को मैं यह कहता हू कि भई अब कोई दिवंगत नही हो रहा है तो क्या मै दिवंगत हो जाऊं ?

ऐसी स्थिति मे वे सज्जन कहते हैं, 'नही साहब, आप ऐसा मत करिये, फिर शोक सभायें कौन करवायेगा।'

'तो फिर तुम हो जाओ।' मैं खीझकर कहता हूं। सज्जन शोक विह्वल होकर लौट जाते हैं।

शोक सभा मे दो मिनट का जो मौन रखा गया है वह अधिकाश साथियो के लिए असह्य होता है। सभी इस पीड़ा से मुक्ति चाहते हैं। मैंने साथियो से कहा है—वे दो मिनट का मौन समाप्त करवाने के लिए अपने सघ के माध्यम से ज्ञापन दें, तो यह परम्परा भी खत्म की जा सकती है। माग करने वालों का मानना है कि साहब मृत्यु के समाचार से वे इतने

शोकाकुल हो जाते हे कि वे किसी भी हालत मे एक जगह रुककर शोक व्यक्त नही कर सकते। भला शोक से भरा हृदय कार्यालय मे रुके भी तो कैसे ?

मुझे आप कुछ भी समझें—मैं शोक सभाओ से परेशान हू—मुझे और कोई मानवीय कार्य दिया जाना चाहिए। लोगो का यह मानना है कि वैसे शोक सभा का कार्य भी मानवीय सवेदनाओ के अत्यंत निकट है लेकिन मुझे लगता है यह नौकरी मेरे लिए ठीक नही है और यदि अन्य कोई कार्य नही मिला तो मुझे नौकरी से त्यागपत्र देना होगा। अब मैं किसी भी स्थिति मे शोक सभायें नही करवा सकता।

किस्सा मेरी चमेली का

खैर फिल्मी चमेली की शादी तो कैसे तैसे हो गयी परन्तु अभी कितनी ही चमेलियां हैं जो त्रस्त हैं—घुट रही है और दम तोड रही हैं। चमेली कोई आज की आधुनिका नही है अपितु यह आदि नायिका है—जिसकी कहानी युग-युगान्तरों से चली आयी है। आज भी हालत यह है कि हर गली-मौहल्ले, गांव-नगर में चमेली मिल ही जायेगी। परन्तु इन चमेलियों की कथा जानने की कभी किसी ने कोशिश की है, शायद नही, हां एक बार मैंने जरूर की है। जिसका फल मुझे आज तक भोगना पड रहा है। यह किस्सा एक चमेली का ही है। मुझे यह चमेली पन्द्रह साल पहले मिली थी। उस दिन मुझे लगा था कि मेरा मन उसकी गंध से सराबोर है और मेरे जीवन का साध्य पूरा हो गया है। वैसे भी उसी के नाम के अनुरूप उसकी सहेलियों के नाम थे। एक का नाम गैंदा, दूसरी का नाम गुलाब। इस तरह वे तीनों गैंदा और गुलाब, चमेली कहलाती अतः भला सुगंध की कमी कहाँ रहने वाली थी। परन्तु यह खुशबू ज्यादा दिन नही टिक पायी और सुगंध अपने आप दुर्गंध में तब्दील होने लगी।

चमेली के नाज-नखरे शनै-शनैः परवान चढने लगे और मैं अल्प वेतन भोगी कर्मचारी उसकी चक्की मे इस तरह पिसने लगा—जैसे चक्की में पिसता अनाज, मैंने लाख समझाना चाहा कि हमें चादर जितने ही पांव पसारने है—परन्तु चमेली पर जमाने की हवा सवार थी—उसने कभी मेरी माली हालत पर रहम नही खाया उल्टे वह मुझे खाती रही। अब मुझे पछतावा होने लगा कि मैंने आखिर चमेली से शादी क्यो की?

क्या सारी चमेलियां इसी तरह की होती हैं, नहाना-धोना साज-सिंगार

'देखो चमेली यह ज्यादती है। मैंने तुम्हारे पिता को 'मुहब्बत का दुश्मन' तो कहा था—परन्तु मुझे कतई पता नहीं था कि हमारी मुहब्बत का अन्त पन्द्रह साल बाद इतना वीभत्स और दुखद होगा।'

'रहने दो बस ज्यादा मत सुनो मुझसे कमाने-खिलाने की बस की नहीं तो बच्चों को दे दो जहर और मुझे घासलेट डालकर तीली लगा दो और ले आओ नई चमेली, मुझे पता है—तुम मुझे अधा रहे हो', चमेली ने गुस्से में कहा।

मैं सन्निपात के रोगी की तरह ठण्डा पड़ गया। मुझे यह आशा नहीं थी कि चमेली का यह भी एक रूप है। मैं उसमें यह भी कहने की स्थिति में नहीं रहा कि मैं खिला-पिला तो सकता हू परन्तु उसकी रोज-रोज सजने-सवरने की चीजें तथा साड़ियां खरीदने की स्थिति मे नहीं हू। परन्तु मैं यह सोचकर चुप रहा कि कहीं चमेली ने भावावेष में नौ बच्चों की कतार की कतार को मेरे पीछे छोड़कर कोई कृत्य कर लिया तो मैं कहीं का नहीं रहूगा। अत. फिलहाल चमेली जैसी भी है—है तो अपनी ही। जमाने मे अपनी-अपनी चमेलियों की महिमा अपनी-अपनी तरह से अलग है। अपनी चमेली का किस्सा मैं बयान कर चुका हू। हो सकता है आपकी चमेली भी ऐसी ही हो। परन्तु चमेली से नहीं खैर, अपनी-अपनी चमेलियो और अपने-अपने दुख-दर्द भाग्य में जो बदा है होगा।

तथा फैशन परेड में भागने की होड़, क्या सभी चमेलियों ने अपने सोकाल्ड पतियों की यही दुर्गति बना रखी है ? परन्तु इस आकलन में कोई अच्छे परिणाम मेरे हाथ नही लगे और मैं अपने आपको सर्वाधिक रूप से दुर्भाग्यशाली इन्सान मानता रहा ।

चमेली ने ऐसे गुल खिलाये कि उन फूलों को चुनना मेरे लिए दूभर हो गया । आये साल एक नया फूल हमारे बीहड़ में खिल उठता और लालन-पालन जटिल हो गया । मेरी अपनी आवश्यकतायें गौण हो गयीं । प्राथमिक आवश्यकतायें चमेली की तथा उसके खिलाये गुलों की मुख्य रूप से उभर कर आ गयीं। पौन दर्जन गुल खिलाने के बाद चमेली ने नये फूलों को जन्म न देने की ठानी । उस दिन मैंने सांस में सांस ली परन्तु अब क्या था पानी सर से गुजर चुका था। चिड़ियायें खेत चुग चुकी थीं । बाकी था तो केवल किसान—जिसे दुबारा पिले रहकर खेत को नये सिरे से उपजाऊ बनाकर सार-सभाल करनी थी ।

इसी दरम्यान एक बार मैंने चमेली से कहा, 'देखो चमेली, खुद को स्थितियों के अनुरूप ढालने की चेष्टा करो । ऐसे कैसे काम चलेगा बच्चों की जिम्मेदारी बढ गयी है । हमें अब उनकी तरफ ध्यान देना है । उधर गैंदा और गुलाब को देखो वह कितनी शालीनता से गृहस्थी की गाड़ी को चला रही हैं और एक तुम हो कि अभी अधेडावस्था में आने के बाद भी फिजूलखर्ची से बाज नही आती। सच चमेली मुझ पर रहम करो और जिन्दगी की अविस्मरणीय भूल मत बनो ।'

चमेली भभक पड़ी, 'आपने मेरे लिए किया क्या । सिर्फ बच्चा पैदा करने की मशीन समझा । अपने आप को समझाते नही दोष मुझे देते हो । अरे शुक्र करो वह तो चमेली मिल गयी वरना भूल जाते इतने बच्चों की सार-संभाल करना, आपके घर मैंने सुख कब पाया है, तुम्हें याद होगा कि मेरे पिताजी ने मुझे आपसे शादी करने को कितना रोका था परन्तु वह तो मेरे माथे ही बैठा बाज—जो मैं कुछ नहीं समझ पायी । उस दिन मैंने तुम्हारे साथ-साथ अपने पिता को मुहब्बत का दुश्मन कह डाला था। आज मुझे लग रहा है कि पिताजी मेरे दुश्मन नही शुभेच्छुक थे, वे तो चाहते थे कि मैं खुश रहूं पर हाय री किस्मत···।'

'देखो चमेली यह ज्यादती है। मैंने तुम्हारे पिता को 'मुहब्बत का दुश्मन' तो कहा था—परन्तु मुझे कतई पता नहीं था कि हमारी मुहब्बत का अन्त पन्द्रह साल बाद इतना वीभत्स और दुखद होगा।'

'रहने दो बस ज्यादा मत सुनो मुझसे कमाने-खिलाने की बस की नहीं तो बच्चों को दे दो जहर और मुझे घासलेट डालकर तीली लगा दो और ले आओ नई चमेली, मुझे पता है—तुम मुझे अधा रहे हो', चमेली ने गुस्से मे कहा।

मैं सन्निपात के रोगी की तरह ठण्डा पड गया। मुझे यह आशा नहीं थी कि चमेली का यह भी एक रूप है। मैं उसमें यह भी कहने की स्थिति मे नहीं रहा कि मैं खिला-पिला तो सकता हू परन्तु उसकी रोज-रोज सजने-सवरने की चीजें तथा साडियां खरीदने की स्थिति मे नहीं हू। परन्तु मैं यह सोचकर चुप रहा कि कहीं चमेली ने भावावेष में नौ बच्चों की कतार की कतार को मेरे पीछे छोडकर कोई कृत्य कर लिया तो मैं कहीं का नहीं रहूंगा। अत. फिलहाल चमेली जैसी भी है—है तो अपनी ही। जमाने मे अपनी-अपनी चमेलियों की महिमा अपनी-अपनी तरह से अलग है। अपनी चमेली का किस्सा मैं बयान कर चुका हू। हो सकता है आपकी चमेली भी ऐसी ही हो। परन्तु चमेली से नहीं खैर, अपनी-अपनी चमेलियो और अपने-अपने दुख-दर्द भाग्य मे जो बदा है होगा।

चिंता नहीं परीक्षाओं की

'मेरे प्रिय मित्र ! अब तो आंखें खोलो। बहुत सो लिये। बहुत दिन कालेज कैंटीन मे बैठ लिये। बहुत दिन तुम अपनी क्लासफैलो के साथ घूम लिये, बहुत दिन तुम क्लास मे गायब रहकर सिनेमा देख चुके। बहुत दिन तुम धींगा मस्ती कर चुके। देखो ये दिन परीक्षा-सखी के आने के हैं। वह अब इस चाल से आ रही है कि तुम उसके लिए सही रूप से तैयार नही रहे तो कोई भी अनर्थ हो सकता है।'

'मेरे हितैषी मित्र, बता मुझे इसके लिए क्या करना चाहिए। सच, मैं बहुत दिनो अधेरे मे रह लिया। जल्दी उपाय बता। पता नही क्यो इन दिनों मेरी आखों मे पिताजी की गुस्से से घूरती लाल आखे और हाथ वाला बेंत बार-बार आने लगता है।'

'घबरा मत दोस्त ! मैं तेरी बेचैनी से परिचित हूं। प्रत्येक विद्यार्थी इन्ही दिनों मे बौखला जाया करता है। धैर्य रख। चिन्ता मत कर। अब तो बस अपने दिमाग को एकाग्र कर ले, सब बाधाएं मिट जायेगी। तुझे यही चिन्ता है न कि तू पूरे साल पढ नही पाया और फेल हो जायेगा। घबरा मत पढने से पास थोड़े ही होते है ! पास तो अब हथकण्डों से होते है···आज-कल तो सफलता और असफलता हथकण्डो मे निहित है। बोल, बिना पढ़े पास होने के अचूक नुस्खे बताने पर तू यदि पास हो गया तो मुह मीठा करायेगा ?'

'मीठा ही क्यो, मैं तेरे मुह मे मीठा ठूस दूगा। क्या तू भी बिना पढ़े ही पास हो गया था ?'

'मेरे बारे मे तू क्यों चिंतित होता है। मैं पढा या नही। मेरे मूर्ख मित्र,

स्वार्थी बन। सिर्फ अपनी सोच। मेरे बारे में रुचि लेगा तो तुझे पास होने के अचूक नुस्खो से वंचित रहना पड़ सकता है।'

'ऐसा मत कर लंगोटिया यार, मुझे ये नुस्खे तू पहले ही बता देता तो मैं तुझसे किसी भी हालत मे पांच साल पीछे नही रह जाता। मेरे भविष्य पर तरस खा और मेरा उद्धार कर।'

'भैया—अब सोने के दिन नही हैं। अब दौडधूप करने के दिन हैं। विश्वविद्यालय जा। लोगो से मिल-जुल और किसी भी साधन से हो, चाहे सर्वव्यापी शस्त्र रिश्वत से हो, पेपर सैंटर का नाम मालूम कर और उन्ही प्रश्नो को याद कर लें जो पेपर सेंटर तुम्हे बताये। पेपर सैंटर काबू मे नही आया कोई बात नही। रोल नबर लिखकर कापी खाली दे आ—अब तू परीक्षक का नाम-पता मालूम कर ले—और जो काम तू तीन घटे में परीक्षा भवन में बैठकर नही कर पाया, उसे अब उसी के घर छः घटे बैठकर तसल्ली मे निबटा ले।

जिस पेपर मे तुझे सदेह हो कि न तो पेपर सैंटर का मालूम पड़ा और न परीक्षक का ही तो उस पेपर का बहिष्कार कर दे। कापिया फाड़ दे। प्रश्नपत्र को आउट ऑफ कोर्स बताकर आक्रोश की मुद्रा मे परीक्षा-भवन छोड दे। परीक्षक का घेराव कर। प्रिंसिपल के ऑफिस पर पथराव कर और विश्वविद्यालय परिसर में आमरण अनशन पर बैठ जा। तू मत समझ कि अकेला है, इस कार्य के लिए तेरा साथ देने के लिए भवन के सभी विद्यार्थी तैयार रहेंगे।

हो सकता है कुछ बैठे रहे। उन्हें बैठा रहने दे। वे लोग आदर्शवादी मूर्ख है। जिस पेपर का बहिष्कार तूने किया है उसकी परीक्षा दुबारा होगी। अब तो यह पेपर सैंटर भी बदल गया। कोशिश कर पेपर मिल जायेगा। पेपर सैंटर का पता नही चला तो पेपर छप रहे प्रेस का पता कर ले। आजकल तो हमारा रेलवे विभाग भी कापियों की हेरा-फेरी व गायब आदि कराने मे बहुत सेवा करने लगा है। वहा ऐसे लोगों से मिल जो इस तरह के कामो मे लोगो का परहित कर रहे है। परीक्षा-भवन मे कापी नही फाड सके रेल वैगन से कापियो का बडल गायब कर दे और रद्दी मे बेच दे। पता पड़ जाय तब भी कुछ नही होने वाला है।

आजकल तो परीक्षार्थियों को दो-तीन बार तक पेपर बहिष्कार करने की सुविधा विश्वविद्यालय ने दे रक्खी है। उठ! सुविधाओं का फायदा उठा और पास हो। कम नंबर हैं तो ज्यादा करा ले। तृतीय श्रेणी है तो प्रथम श्रेणी करा ले। मूल परीक्षा में फेल हो गया तो प्रश्न-पत्र रिवेल्यूएट करवा ले। उनमें कोई न कोई व्यक्ति तो परिचित निकल ही आयेगा। पास होने के लिए कुछ तो कर।

बिन बरखा मन हरषा

मुख्यमंत्री ने अपने बंगले के बाहर लॉन में आकर आकाश की ओर देखा। घटाएं उमड़ रही थी—बादल गरज रहे थे और लगता था जैसे वर्षा आने वाली हो, परन्तु मुख्यमंत्री सब समझ रहा था कि पिछले डेढ़ महीने से ऐसा ही हो रहा था, वर्षा आ नही रही है। उसका मन मयूर खिल उठा और वह अपने पी० ए० से बोला, 'सुनो पी० ए० वर्षा आज भी नही आयेगी!'

'आयेगी कैसे, इन्द्र महाराज ने आपकी अर्ज सुन ली है।' पी० ए० ने दुम हिलाकर कहा।

'तुम बड़े चालाक हो पी०ए०, पता है इस बार फिर सूखा और अकाल दोनों बड़े व्यापक रूप से पड़ेंगे।'

'पता है मुझे भी सा'ब। राहत की पजीरी से जनता का दिल जीतने मे फिर सहूलियत होगी।' पी० ए० बोला।

'यही नही पी० ए०, केन्द्रीय सरकार से सूखे और अकाल पीडित क्षेत्रों के लिए जो इमदाद मिलेगी—स्वयंसेवी संगठनों से जो चन्दा मिलेगा—उसमे पर्याप्त घालामेली का तो यह सुअवसर है ही, इसी के साथ चुनाव जीतने मे, यह सूखा और अकाल बड़ी मदद करेगा।' मुख्यमंत्री खुशी से हिनहिनाया।

पी० ए० को यह रहस्य समझ में नही आया अतः वह जिज्ञासु की तरह फिर मुख्यमंत्री के तलुवे चाटकर बोला, 'यह बात मेरी समझ से परे है—अतः इसको जरा खोलकर समझा सकेंगे तो मेरे सामान्य ज्ञान मे वृद्धि होगी।'

कौन। आपकी खातिर मैंने अपने सगे सम्बन्धी सबसे नाता तोड़ा है तथा तुम्हें परमेश्वर मानकर पूजा है। ऐसे में जब वर्षा हो ही नहीं रही है तथा जनता त्राहि-त्राहि कर उठी है ऐसे सुनहरी मौके में आपको छोड़कर भला मैं कहां जाऊंगा?'

'बहकना छोड़ो पी० ए०···अकाल राहत के लिए कागजों पर सरकारी अनुदान के लिए योजनाएं बनाओ तथा केन्द्रीय सरकार के अध्ययन दल के लिए पर्याप्त भ्रमित करने के लिए साधन जुटाओ। तुम्हारा और मेरा तथा अपने मंत्रीमण्डल का भला इसी में है कि इस समय मुद्रा बटोरकर अपना घर भर लें और आम चुनाव को बहुमत से जीत लें।' मुख्यमंत्री एकदम गंभीर हो गया।

'चिन्ता मत करिये महाराज, कागजी घोड़ा चलाने में मेरा मुकाबला नहीं है—करोड़ों अनुदान मिलेगा—जिसमें से आधा एम० एल० ए०, एम० पी० जी को तो आधा वोटर्स को बांटकर बाजी फिर आपके हाथ में आने वाली है।'

'परन्तु यह मरी बरसात आ गई तो सारा खेल खराब हो जायेगा।' मुख्यमंत्री ने अपनी मूल परेशानी को दोहराया।

'घबराइये नहीं, पहली बात तो बरसात आयेगी नहीं, आयेगी भी तो इतनी नहीं कि जिससे राज्य में सूखा और अकाल घोषित न किया जा सके। आप तो बस आजकल में घोषणा करने में तत्परता बरतिए—बाकी कागजी कार्रवाई के लिए मुझ पर भरोसा रखिये।' पी० ए० बोला।

मुख्यमंत्री वर्षा से पगलाए मयूर की तरह बिना बरसात के खुशी से नाचकर बुदबुदाया—

> घन घमण्ड नभ गरजत घोरा,
> बिन बरखा मन हरषा मोरा!

पी० ए० ने सुर मिलाया और बादलों को बरसने से डांटा। इन्द्र महाराज से न बरसने की अर्चना की तथा सूखा और अकाल की घोषणा के लिए संवेदनशील बयान तैयार किया जाने लगा।

□□